Aug
2026

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अस्ल मेयार

“मैं सफ़ाई से कहता हूं कि अब किसी मुल्क की यह तारीफ़ नहीं कि वहां बड़ी संख्या में यूनिवर्सिटियाँ हैं, यह कोताह–ए–नज़री अब बहुत पुरानी हो गई। सवाल यह है कि इल्म के शौक़ में, जुस्तुजू की राह में, इल्म–ओ–अख़्लाक़ के फैलाने और बुराइयों, बदअख़्लाक़ियों, सफ़्फ़ाकी व दरिन्दगी, दौलत व कूव्वत की परस्तिश को रोकने के लिए कितने आदमी अपनी ज़िन्दगियाँ दाँव पर लगाते हैं। अपनी क़ौम को साहिब–ए–शऊर, मुहज़्ज़ब व बाज़मीर क़ौम बनाने के लिए कितनी तादाद में नौजवान मौजूद हैं जो अपनी ज़ाती सरबुलन्दी और तरक़्क़ी से आंखें बन्द करके इस मक़सद के लिए अपने को वक़्फ़ करते हैं!” (इल्म का मक़ाम और अहल–ए–इल्म की ज़िम्मेदारियाँः 12)

● मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैय्यद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रह0)

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल नदवी
दारे अरफ़ात, तकिया कलां, रायबरेली

प्राकृतिक व व्यवहारिक ज्ञान में महारत

“पश्चिमी निज़ाम–ए–तालीम–ओ–तरबियत के सिलसिले में हमारा मौक़िफ़ बिल्कुल वाज़ेह, फ़ैसलाकुन और दो–टूक होना चाहिए। हमें हर वह चीज़ क़बूल करनी है जो इंसानियत के लिए नफ़ा–बख़्श हो। इसलिए कि अल्लाह के रसूल (स०अ०व०) ने इसको “इल्म–ए–नाफ़े” से ताबीर किया है। इसके अलावा हर वह इल्म जो इंसानियत के लिए मुफ़ीद व नाफ़े न हो, इस्लाम की निगाह में हक़ीक़ी इल्म कहलाने का मुस्तहिक़ नहीं। ऐसे बे–मक़सद उलूम में अपनी उम्र–ए–अज़ीज़ के क़ीमती लम्हात ज़ाया करने से कहीं बेहतर है कि आदमी अपने क़ीमती औक़ात को दावत–ओ–इस्लाह और इरशाद–ओ–हिदायत के कामों में लगाए।

आज ज़रूरत इस बात की है कि अगर हम अपने तालीमी मराकिज़ व जामिआत के अंदर जदीद मग़रिबी फ़लसफ़ों और नज़रियात को शामिले–निसाब करें जैसे: डार्विन और फ्रायड के अफ़कार, हीगल और मार्क्स के मआशी व तारीख़ी नज़रियात, या तारीख़ की माद्दी ताबीर के अलग–अलग तसव्वुरात वग़ैरह तो इन अफ़कार व नज़रियात से मुतास्सिर होकर और इनको लाइक़–ए–अज़मत समझकर शामिले–निसाब हरगिज़ न किया जाए बल्कि उन पर नाक़िदाना व मुहासिबाना मौक़िफ़ क़ायम करने और नस्ल–ए–नव के ज़ेहन व दिमाग़ में उनकी बे–वक़अती पैदा करने के लिए उनको अपने निसाब में जगह दी जाए। बड़े अफ़सोस की बात है कि आज आलमे–इस्लाम की दानिशगाहों में इसके बिल्कुल बरअक्स सूरत–ए–हाल हमें नज़र आती है।

अस्र–ए–हाज़िर में साइंस की वो फ़लसफ़ियाना बहसें जिनका तअल्लुक़ ग़ैब की बातों और ग़ैर–महसूसात से है और उन्हें कायनात के राज़–हाए–सरबस्ता को सर करने का दावा है, हमारे नज़दीक ऐसे बे–बुनियाद मुबाहिस यूनान व रूम के क़दीम हुक्मा की जाहिलाना क़यास–आराइयों से कुछ मुख़्तलिफ़ नहीं। इसलिए कि इन बातों का सही इल्म अल्लाह के सिवा किसी को नहीं और इनका इदराक इंसानी अक़्ल व शुऊर के बस की बात नहीं। इस सिलसिले में मुंसिफ़ाना नज़रिया यह है कि नस्ल–ए–नव के क़ीमती वक़्त को ऐसी ला–यानी और फ़ुज़ूल बहसों में उलझने से बचाया जाए जिनका ज़िंदगी के अमली मैदान से कोई तअल्लुक़ नहीं और न ही क़ौमों की तामीर उनसे वाबस्ता है।

हमारी तवज्जो का असल मरकज़ वह उलूम–ए–तबईया (Exact Sciences) होने चाहिए जिनके ज़रिये इसरार–ए–कायनात खुलते हैं और ख़ालिक़–ए–हक़ीक़ी की मारिफ़त नसीब होती है यानी इल्म–ए–तबईयात, हयातियात, फ़लकियात और अर्ज़ियात वग़ैरह।

इसी के साथ हमें तत्बीक़ी उलूम (Applied Sciences) में भी महारत पैदा करने और अपनी तवानाई ख़र्च करने की ज़रूरत है यानी इंजीनियरिंग, तिब्ब, टेक्नोलॉजी, कंप्यूटर साइंस वग़ैरह।

आज ज़रूरत है कि हम अपनी दानिशगाहों और जामियात में इन उलूम पर ख़ुसूसी तवज्जो दें। इन्हें अपनी इल्मी और सिनअती बेदारी का महवर बनाएं और अपनी नई तहज़ीबी व मआशी तामीर की एक बुनियाद क़रार दें। सच्ची बात यह है कि इन उलूम पर पूरी तरह क़ुदरत रखने के बाद ही अक़वाम–ए–आलम के दरमियान आलमे–इस्लाम अपने फ़राइज़–ए–मंसबी को बजा तौर पर अदा कर सकता है।”

हज़रत मौलाना सैय्यद मुहम्मद-अल-हसनी (रह०)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

मासिक

अरफ़ात किरण

रायबरेली

अंक: 08 अगस्त २०२६ ई० वर्ष: 18

सम्पादकीय मण्डल

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

मुहम्मद हसन नदवी

सह सम्पादक

मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

मुहम्मद अरमुग़ान बदायूंनी नदवी

अनुवादक

मुहम्मद सैफ़

अहल-ए-इल्म का मक़ाम-ओ-मर्तबा

अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया:

"ख़बरदार! दुनिया मलऊन (लअनती) है और जो कुछ दुनिया में है वह भी मलऊन (लअनती) है, सिवाय अल्लाह के ज़िक्र के और उस चीज़ के जो अल्लाह के ज़िक्र से ताल्लुक़ रखती हो और आलिम और इल्म हासिल करने वालों के।"

सुनन तिरमिज़ी: 2322

E-Mail: markazulimam@gmail.com www.abulhasanalinadwi.org

मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली, यू०पी० 229001

मो० हसन नदवी ने एस० ए० आफसेट प्रिन्टर्स, मस्जिद के पीछे, फाटक अब्दुल्ला खाँ, सब्ज़ी मण्डी, स्टेशन रोड रायबरेली से छपवाकर आफिस अरफ़ात किरण, मर्कज़ुल इमाम अबिल हसन अल-नदवी, दारे अरफ़ात, तकिया कलां रायबरेली से प्रकाशित किया।

Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi Samiti (Punjab National Bank) A/c No. 6127002100000339 (IFSC: PUNB0612700)

यह एक नुक्ता है आरिफ़ाना

जनाब आमिर उस्मानी (रह०)

मुजाहिदो! इसको याद रखना, यह एक नुक्ता है आरिफ़ाना
जिहाद-ए-हक़ कारगर न होगा, अगर नहीं गिरया-ए-शबाना

हज़ार जिद्दत तराज़ियों के लिबास बदला करे ज़माना
मगर यक़ीनन रहेगा आमिर - मिज़ाज-ए-बातिल वही पुराना

उरूज से बहरावर न होगी कभी हयात-ए-मुनाफ़िक़ाना
ज़बां पे इस्लाम का वज़ीफ़ा मगर ख़्यालात काफ़िराना

हमारी ग़फ़लत की इन्तिहा क्या, हमारी पस्ती का क्या ठिकाना
गुनाह तो फिर गुनाह ठहरा इबादतें भी हैं मुजरिमाना

नवा-ए-हक़ को अगर यह दुनिया क़रार देती है बाग़ियाना
मैं तोहमत-ए-बुज़दिली न लूंगा मुझे गवारा है सर कटाना

मुझे ख़बर है मैं जानता हूं यह दौर है आग का समन्दर
मगर ग़म-ए-इश्क़ का सफ़ीना उसी की मौजों पे है चलाना

बला से करवट न लें अंधेरे बला से परवा करे न आंधी
मगर मेरा फ़र्ज़-ए-मन्सबी है चिराग़-ए-पैहम जलाये जाना

वो दौर-ए-नुक़सान-ओ-इब्तिला हो कि अहद-ए-इक़बाल-ओ-कामरानी
वफ़ा के बन्दे रज़ा के पैकर गुज़ार देंगे मुजाहिदाना

ह कोई दरगाह हो कि मस्जिद अगर वहां अज़ रह इबादत
नियाज़मंदी हो मासवा कि तो उससे बेहतर शराबख़ाना

क़दम-क़दम पर तरह-तरह की इबादतें वज़अ करने वालो!
बताओ क्या तुमने दीन-ए-हक़ को हक़ीर और ना तमाम जाना

सतीज़ा गाह-ए-अमल से आमिर जो कुंज उज़लत में ला बिठाए
वह ज़ुहद है यास-ओ-बुज़दिली को जवाज़ देने का इक बहाना

इस अंक में:

इल्म और अख़्लाक़...3
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तक़वा क्या है?...4
बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

सुबूत–ए–नसब के एहकाम...6
मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

दो बुनियादी बातें..8
मौलाना अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

समाज और नवजवान 10
मौलाना नासिरुद्दीन नदवी प्रतापगढ़ी

जम्हूरियत – ख़ुदकुशी की राह पर 11
सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

इल्हाद का तूफ़ान – असबाब व इलाज..............................13
मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

उक़्क़ाबी रूह जब बेदार होती है जवानों में...........................15
मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

पैमाना–ए–मुहब्बत...17
मोहम्मद मुसअब नदवी

इरतिदाद की लहर – असबाब व इलाज............................19
मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

सम्पादकीय

इल्म और अख़्लाक़

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

तालीम (Education) एक ऐसा जौहर है कि अगर वह सही दिशा में दी जाए तो उसके ज़रिये इन्सानी दुनिया को बहुत कुछ दिया जा सकता है, जिसकी आज दुनिया मोहताज है, लेकिन अगर उसका रुख़ सही न हो तो पूरी इन्सानियत को उसके नुक़सान भुगतने पड़ते हैं। इस ज़माने में सुपरपॉवर ताक़तों के ज़रिये दुनिया में फ़साद और बेचैनी कि जो एक आम फ़िज़ा नज़र आ रही है, उससे साफ़ अंदाज़ा होता है कि जब भी इल्म और अख़्लाक़ का तवाज़ुन बिगड़ता है तो उसके नतीजे में हालात बिगड़ते हैं और ख़ुदग़र्ज़ी का मानसून पूरी दुनिया पर छा जाता है।

तालीम का सबसे बुनियादी मक़सद अपने अख़्लाक़ को संवारना और अपने अन्दर इन्सानियत का दर्द पैदा करना है। अगर तालीम हासिल करने के बाद कोई इन्सान इन्सान न बने तो सच्ची बात यह है कि उसमें और जानवर में कोई फ़र्क़ नहीं। अफ़सोस की बात है कि आज हमारी दानिशगाहों से ऐसे अफ़राद निकल रहे हैं जिनके सीने में इन्सानियत का दर्द नहीं। वह बड़े डॉक्टर, इन्जीनियर, और साइन्टिस्ट तो बनते हैं लेकिन उनके अन्दर ख़ुदग़र्ज़ी की एक आग है।

आज दुनिया का हाल है कि उसके पास हर तरह के साधन मौजूद हैं लेकिन उसे यह मालूम नहीं है कि उसका सही इस्तेमाल क्या है? इन्साइक्लोपीडिया ऑफ़ बर्नाटिका में हिरोशिमा और नागासाकी पर बम बरसाने की यह वजह बयान की गई कि करोड़ों लोगों की जानें बचाने के लिए लाखों लोगों की जानें लेना ज़रूरी था। याद रखिये! अगर आप किसी क़ौम या कम्यूनिटी पर हथियार उठाएंगे तो उनके अन्दर भी इन्तिक़ाम का एक जज़्बा पैदा होगा।

एक तरक़्क़ी याफ़्ता समाज के लिए ज़रूरी है कि को–आपरेशन का मिज़ाज हो, उसके बग़ैर कोई समाज आगे नहीं बढ़ सकता, लेकिन इस वक़्त हमारे मुल्क में जिस तरह हालात पैदा किये जा रहे हैं और तालीम को जिस तरह कमर्शियलाइज़ किया जा रहा है, यह हम सब के लिए ख़तरे की चीज़ है। यह मुल्क हमेशा मुहब्बत और प्यार और अमन व शांति का मुल्क रहा है। अफ़सोस की बात है कि आज इस मुल्क के दरख़्त–ए–इक़बाल को घुन लगता जा रहा है। इस वक़्त पूरी मुल्क में ख़ुदग़र्ज़ी की एक आग लगी है। ख़तरा है कि कहीं इस मुल्क के टुकड़े–टुकड़े न हो जाएं। अगर यहां के रहने वालों को कमज़ोर किया जाता रहा तो हक़ीक़त में इस मुल्क की ताक़त कमज़ोर होगी और इस मुल्क का कोई ख़ास वज़न बाक़ी न रहेगा।

इन हालात में अस्ल ज़िम्मेदारी मुसलमानों की है जिनको अल्लाह ने इल्म–ओ–अख़्लाक़ का तवाज़ुन अता फ़रमाया है। आज से चौदह सौ साल पहले की तारीख़ उठाकर देखिये तो नज़र आयेगा कि उस वक़्त पूरी दुनिया किस तरह ख़ुदकुशी के लिए आमादा थी और तबाही के दहाने पर खड़ी थी लेकिन ऐसे हालात में फ़ारान की चोटियों से इस्लाम का सूरज तुलू हुआ और अल्लाह के नबी (स0अ0व0) की इन्सानियत नवाज़ तालीमात और आपकी करम फ़रमाई ने पूरी दुनिया में इन्क़िलाब बरपा कर दियाः

बहार अब जो दुनिया में आई हुई है — यह सब पौध उन्हीं की लगाई हुई है

आज हमें उसी तर्ज़े ज़िन्दगी और लाज़वाल व सरमदी दौलत को दुनिया–ए–इन्सानियत के सामने पेश करना होगा। सही बुनियादों के साथ इल्म को फ़रोग़ देना होगा और यह बताना होगा कि इस वक़्त किन मोरल वैल्यूज़ की दुनिया को ज़रूरत है। टेक्नालाजी के इस दौर में इस बात की शदीद ज़रूरत है कि हम वसाएल व आलात का सही इस्तेमाल दुनिया को बताएं और इल्म व अख़्लाक़ का बेहतरीन इम्तिज़ाज दुनिया के सामने पेश करें।

तक़्वा क्या है?

बिलाल अब्दुल हयि हसनी नदवी

नेकी और गुनाह क्या है?

"हज़रत वाबिसा बिन माबद (रज़ि0) फ़रमाते हैं कि मैं अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो आप (स0अ0व0) ने खुद यह बात फ़रमाई कि तुम नेकी के बारे में सवाल करने आए हो? मैंने अर्ज़ किया: जी हां, आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया: तुम अपने दिल से फ़तवा लो (पूछो) इसलिए कि नेकी वह है जिस पर नफ़्स और दिल मुतमईन हो जाए और गुनाह वह है जो मन में खटक और सीने में ख़लजान (बेचौनी) पैदा करे, अगरचे फ़तवा देने वाले फ़तवा दे देंगे।" (सुनन दारमीः 2588)

इस हदीस में यक़ीनन उन लोगों का तज़किरा है जिन के दिलों को अल्लाह तबारक व तआला ने किसी हद तक क़ल्ब–ए–सलीम (पाक दिल) बनाया है और उन को अल्लाह ने कुछ न कुछ शरीअत का इल्म भी दिया है, चाहे वह पूरे आलिम न सही लेकिन वह मोटी–मोटी बातें जानते हों, फिर उनके सामने जब कोई बात आती है तो उस वक़्त उनका दिल फ़ैसला करता है कि यह बात सही है या नहीं? अगर उन का दिल यह बोलता है कि यह बात ठीक है और उन को पूरी तरह से इत्मिनान है तो वह बात सही है और अगर उन को खटक है लेकिन वह इसलिए पूछ रहे हैं ताकि उनका काम निकल जाए तो उनको समझना चाहिए कि उनको जो खटक है वह इस बात की अलामत है कि वह चीज़ सही नहीं है बल्कि कुछ न कुछ गड़बड़ है। इसीलिए मैंने बात शुरू में अर्ज़ की कि असलन यह हदीस उन लोगों के लिए है जिन को अल्लाह ने सलामती–ए–क़ल्ब से नवाज़ा है।

इस वक़्त हालात ऐसे हैं कि लोगों के दिल व दिमाग़ में शैतान ने इस तरह बसेरा कर रखा है कि दिलों का फ़ैसला गलत होने लगा है। नफ़्स गलत चीज़ों की तरफ़ जाता है बल्कि आदमी इंतिहाई नामुनासिब चीज़ों के बारे में यह फ़ैसला करता है कि इसमें क्या हर्ज है? यह ऐसी सूरत–ए–हाल है कि इसके नतीजे में हालात बिगड़ते जा रहे हैं।

वह शख़्स जो शरीअत का इल्म ही नहीं रखता, जो यही नहीं जानता कि शराब भी कोई गुनाह की चीज़ है या बहुत सी बुराइयों के बारे में तावील करता है, जैसे इस ज़माने में बाज़ दानिश्वर और पढ़े–लिखे समझे जाने वाले लोगों का हाल यह है कि वह इंतिहाई नामुनासिब तावीलें करते हैं और चीज़ों को जाइज़ करना चाहते हैं। ज़ाहिर है यह जो उनकी तरफ़ से फ़ैसले हैं उनका एतबार नहीं है। एतबार उसी वक़्त होगा जब आदमी को सलामती–ए–क़ल्ब हासिल हो, फिर वह दीन का इल्म भी रखता हो, इसके बाद अगर वह किसी चीज़ पर मुत्मईन हो रहा है तो ग़नीमत है वरना उसी वक़्त मुत्मईन होगा जब वह किसी जानने वाले से मालूम कर लेगा। तो उसको पूरी तरह से इत्मीनान हो जाएगा लेकिन अगर वह जानने वालों से मालूम नहीं करेगा और खुद भी नहीं जानता तो उसको इत्मीनान नहीं होगा। अगर वह दीन की अहमियत को समझता है तो फिर सूरत–ए–हाल यह होती है कि जब तक वह जानने वालों से मालूम न कर ले उस वक़्त तक उसको पूरा इत्मिनान नहीं होता, जब वह जानने वालों से मालूम कर लेगा तभी इत्मीनान होगा। खुद उसके दिल को भी अगर यह सलामती हासिल है तो वह फ़ैसला कर सकता है। अब लोगों का मिज़ाज यह है कि वह दस जगह पूछते हैं ताकि उनके मतलब का फ़तवा मिल जाए। यह इंतिहाई नामुनासिब सूरत है। वह इसलिए पूछते हैं ताकि अपने मतलब की चीज़ें उनके लिए जाइज़ क़रार दे दी जाएं और वह उन पर अमल कर लें।

असल चीज़ शरीअत का हुक्म है और हमें उसी पर चलना है। जब आदमी का मिज़ाज और उसका दिल व दिमाग़ शरीअत के सांचे में ढल जाए और किसी हद तक नफ़्स भी कंट्रोल में आ जाए तो इसके बाद दिल का फ़ैसला बड़ी अहमियत रखता है। बाज़ चीज़ें तो ऐसी होती हैं कि उनको कोई भी इंसान अच्छा नहीं समझता बल्कि बाज़ मर्तबा जो मुसलमान नहीं भी हैं लेकिन उनके अंदर कुछ इंसानियत है तो बाज़ मर्तबा उनके अंदर भी

यह सिफ़त होती है कि वह बुराई को बुराई समझते हैं। ऐसा नहीं होता कि बुराई को अच्छा या अच्छाई को बुरा कहें। यह मिज़ाज अक्सर इंसानों में होता है फिर ईमान वालों का मामला यह है कि अल्लाह ने उनके अंदर यह सिफ़त और ज़्यादा रखी है।

आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया कि नेकी के मुतअल्लिक़ सबसे पहले अपने नफ़्स से सवाल करो, इसलिए कि जिस पर दिल को इत्मिनान हो तो समझ लो कि नेकी है और जो दिल या सीने में ख़लजान पैदा करे तो याद रखो! वह गुनाह है चाहे लोग फ़तवा दे दें।

आज के दौर में फ़तवा देने वाले भी हर तरह के होते हैं। एक वह होते हैं जो इसके अह्ल होते हैं और उनको अल्लाह तबारक व तआला ने यह फ़हम व बसीरत दी होती है। वह लोग जो फ़तवा देते हैं तो उनका एतबार होता है लेकिन इस दौर में यह एक अजीब बात है और लोगों का एक आम मिज़ाज बनता चला जा रहा है कि हर आदमी मुफ़्ती बन जाता है। जो दीन व शरीअत से वाक़िफ़ नहीं, बाज़ मर्तबा वह लोग जिन्होंने दीन की तालीम भी हासिल नहीं की लेकिन वह मसाइल बताने के लिए तैयार हैं। दीन के बारे में रायज़नी कर रहे हैं। यह जो एक आम रिवाज हो गया है इस चीज़ ने पूरी उम्मत को मुसीबत में डाल दिया है। यह इस वक़्त का एक बड़ा फ़ित्ना बन चुका है। दावत व फ़िक्र और दीन के नाम पर वह लोग जिनका दीन से कोई तअल्लुक़ नहीं रायज़नी करते हैं। न वह दीन से वाक़िफ़ हैं, न शरीअत से, न सुन्नत से वाक़िफ़ हैं और न सीरत से लेकिन वह दीन के ठेकेदार बन जाते हैं।

अक्सर यह देखा गया कि इस वक़्त जो एक बड़ा फ़ित्ना पैदा हो गया है आम लोगों में और ख़ास तौर से वह दानिश्वर तबक़ा जिसका अहले दीन से तअल्लुक़ नहीं, मशाइख़ से तअल्लुक़ नहीं, उनके दिमाग़ में यह आ जाता है कि हम असहाबे इल्म यानी पढ़े–लिखे लोग हैं और हमें कुछ पूछने की ज़रूरत नहीं। हम खुद मुताला कर सकते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि वह बराहे रास्त कुरआन मजीद का सिर्फ़ तर्जुमा पढ़ते हैं और कुछ हदीसें पढ़ लेते हैं और फिर रायज़नी शुरू कर देते हैं।

अजीब व ग़रीब बात है। कोई इंजीनियर हो और बोले कि मैं पढ़ा–लिखा हूं इसलिए मुझे डॉक्टर के पास जाने की ज़रूरत नहीं, मैं खुद अपना इलाज कर सकता हूं। कोई नक्शानवीस हो और वह सोचे कि जब मैं नक्शा बना लेता हूं तो सब कुछ कर लूंगा, मुझे किसी और के पास जाने की कोई ज़रूरत नहीं।

अल्लाह तबारक व तआला ने हर एक को अलग–अलग फ़हम अता फ़रमाया है, हर आदमी अपने ज़ौक़ से इल्म के किसी शोबे में इख़्तिसास करता है और महारत पैदा करता है। मेडिकल लाइन में तो यह हाल है कि एक आंख का डॉक्टर है, एक कान का, एक पेट का, पेट में भी अलग–अलग हैं, आंख का डॉक्टर हाथ की बीमारी नहीं देख सकता, दांत का डॉक्टर है तो वह आंख की बीमारी नहीं देख सकता और यह बात पूरी दुनिया में तस्लीम शुदा है। मगर अजीब हाल है कि दीन के मसले को लोगों ने बिल्कुल हल्का समझ लिया है। जबकि जिस तरह मेडिकल लाइन में एक–एक जुज़इयह (हिस्सा) होता है और उसके माहिरीन होते हैं। आजके दौर में इसीलिए एम.डी. कराया जाता है और जो लोग नहीं करते तो उनकी कोई ख़ास अहमियत नहीं होती।

इल्मे दीन की लाइन में भी ग़ैर मामूली तफ़सीलात, बारीकियाँ और जुज़इयात (हिस्से) हैं, आप अगर सिर्फ़ फ़न्ने हदीस को ले लीजिए तो इसकी भी कई शाख़ें हैं। रिजाल का फ़न अलग है, मुस्तलहात का फ़न अलग है, फिर मुतून और शूरूहात की अलग तफ़सीलात हैं। इसीलिए फ़न्ने हदीस में भी अलग–अलग इख़्तिसास होता है। बाज़ लोग रिजाल के माहिर होते हैं, बाज़ लोग मुस्तलहात के माहिर होते हैं और बाज़ लोग मुतून वग़ैरा के माहिर होते हैं। इसके अलावा तफ़सीर व फ़िक़ह के उलूम हैं। इसी तरह सर्फ़ व नह्व का इल्म है जिसका शुमार मुबादियात में होता है। इसी तरह फ़न्ने बलाग़त है जिसके बग़ैर कुरआन मजीद के बहुत से हक़ाइक़ को समझना आसान नहीं। यह सारे फ़ुनून अपनी जगह पर मुसल्लम हैं। अगर कोई शख़्स अपने फ़न के अलावा में रायज़नी करे तो वह नहीं कर सकता। अगर कोई मुहद्दिस फ़तवा बताए तो उसके अंदर फ़तवा बताने की वह अह्लियत नहीं होगी। वह मोहतात रहेगा, एक बड़ा मुफ़स्सिर भी मोहतात रहेगा। इसी तरह एक बड़ा मुफ़्ती हदीस की तहक़ीक़ नहीं करेगा बल्कि बताएगा कि यह मेरा असल मौज़ू नहीं है। आप किसी माहिरे फ़न से रुजू कर लीजिए, जब कि मुफ़्ती दूसरे उलूम में बहुत कुछ महारत रखता है।

सुबूत-ए-नसब के एहकाम

मुफ़्ती राशिद हुसैन नदवी

अल्लाह तबारक व तआला ने कुरआन मजीद में नसब का ज़िक्र बंदों के ऊपर अपनी एक नेअमत के तौर पर किया है, अल्लाह तआला का इरशाद है:

وَهُوَ الَّذِي خَلَقَ مِنَ الْمَاءِ بَشَراً فَجَعَلَهُ نَسَباً وَصِهْراً

"और वही है जिसने पानी से इंसान को पैदा किया तो उसको नसबी और सुसराली रिश्ते वाला बनाया।" (अल–फुरक़ान: 54)

लेकिन अल्लाह तआला ने इसको भी साफ़–साफ़ बयान कर दिया कि उसने जो विभिन्न ख़ानदान और क़बाइल में इंसान को तक़सीम कर रखा है, वह सिर्फ़ एक–दूसरे को पहचानने के लिए है, वरना किसी ख़ास ख़ानदान का फ़र्द होने में फ़ी नफ़्सिही न तो कोई इज़्ज़त व शर्फ़ की बात है, न ज़िल्लत व तहक़ीर की बात। अल्लाह के नज़रदीक मुअज्ज़ज़ तो वही है जो तक़वा और ज़ाती कमाल में बढ़ा हुआ हो। अल्लाह तआला का इरशाद है:

يَا أَيُّهَا النَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَاكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَى...الآية

"ऐ लोगो! हमने तुमको एक मर्द और एक औरत से पैदा किया और तुम्हारे ख़ानदान और बिरादरियां बना दीं ताकि एक दूसरे को पहचान सको। बिलाशुबहा अल्लाह के यहां तुममें से बड़ा इज़्ज़तदार वह है जो तुममें से बड़ा परहेज़गार हो।" (अल–हुजुरात: 13)

और चूंकि सब ख़ानदान हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) की औलाद हैं लिहाजा इस एतबार से किसी को किसी पर फ़ज़ीलत और बरतरी हासिल नहीं है, हर एक जिस ख़ानदान का है उसी को अल्लाह की नेअमत समझना चाहिए। अपने ख़ानदान को छोड़कर अपनी निसबत किसी और ख़ानदान की तरफ़ करना सिर्फ़ उसी वक़्त हो सकता है जब इंसान एहसास–ए–कमतरी का शिकार हो और अपने ख़ानदान को हक़ीर समझता हो। इसीलिए इससे सख़्ती से रोका गया और इस पर शदीद नकीर की गई। चुनांचे नबी करीम (स0अ0व0) का इरशाद है:

من ادعىٰ إلىٰ غير أبيه---الحديث

"जो शख़्स हक़ीक़ी बाप के अलावा अपने को दूसरे बाप की तरफ़ मंसूब करे बहालां कि वह जानता हो कि वह उसका बाप नहीं है तो उस पर जन्नत हराम है।" (अल–बुख़ारी: 6766, मुस्लिम: 63, अन साद बिन अबी वक़्क़ास रज़ि0)

इसी तरह हज़रत अली (रज़ि0) के वास्ते से एक तवील हदीस में है:

ومن ادعىٰ إلىٰ غير أبيه أو انتمىٰ إلىٰ غير مواليه--الحديث

"जो शख़्स अपने आपको अपने बाप के अलावा की तरफ़ मंसूब करे तो उस पर अल्लाह तआला की, फ़रिश्तों की और तमाम लोगों की लानत हो। अल्लाह तआला क़यामत के दिन उसके फ़र्ज़ को क़बूल करेंगे न नफ़्ल को।" (मुस्लिम: 1370, व फ़ील बुख़ारी मआनहु)

इसी तरह उन वालिदैन पर भी सख़्त नकीर की गई जो जान–बूझकर अपने बच्चों के नसब का इनकार करें या बाप के अलावा की तरफ़ निसबत करें। चुनांचे हज़रत अबू हुरैरा (रज़ि0) से मरवी है कि जब आयते मुलाअना नाज़िल हुई तो आंहज़रत (स0अ0व0) ने फ़रमाया:

أيما امرأة أدخلت علىٰ قوم من ليس منهم--الحديث

"जो औरत किसी क़ौम पर ऐसे शख़्स को दाख़िल कर दे जो उनमें से न हो तो उस औरत का अल्लाह से कोई तअल्लुक़ नहीं है और अल्लाह तआला उस औरत को अपनी जन्नत में दाख़िल नहीं फ़रमाएगा और जो मर्द अपने बेटे (के नसब) का इनकार कर दे जो कि वह बेटा उसकी तरफ़ देख रहा हो तो अल्लाह तआला उससे पर्दा कर लेगा और तमाम मख़्लूक़ात की मौजूदगी में अव्वलीन और आख़िरीन के दरमियान उसको रुस्वा कर देगा।" (अबू दाऊद: 2263, नसाई: 3481)

फिर शरीअत ने शक व शुब्हात की बेख़–कनी करते हुए फ़राश को बड़ी अहमियत दी ताकि बिला वजह कोई बच्चे का इनकार करके उसकी ज़िम्मेदारियों से फ़रार इख़्तियार करने की कोशिश न करे और बच्चा ज़िंदगी भर

के लिए लोगों के तानों से महफ़ूज़ रहे। चुनांचे आम उसूल बना दिया गया कि अगर मर्द व औरत शादीशुदा हों और कोई बच्चा पैदा हो तो वह शोहर ही का बच्चा समझा जाएगा, सिर्फ़ ज़बानी इनकार से वह ज़िम्मेदारियों से भाग नहीं सकता। हां! अगर उसको पक्का यक़ीन हो कि बच्चा उसका नहीं है तो उसे लिआन करना होगा (जिसके लिए दारुल इस्लाम और क़ाज़ी की मौजूदगी ज़रूरी होगी) और लिआन की मुकम्मल कार्रवाई के बाद ही वह बच्चा के नसब का इनकार कर सकेगा और यह उसूल भी बना दिया गया कि बदकारी से नसब साबित नहीं होगा। चुनांचे हज़रत आइशा (रज़ि0) आंहुज़ूर (स0अ0व0) से नक़ल करती हैं कि आप (स0अ0व0) ने फ़रमायाः

الولد للفراش وللعاهر الحجر

"बच्चा फ़राश का यानी उस शख़्स का होगा, औरत जिसके निकाह में है और ज़ानी को संगसार किया जाएगा / या ज़ानी को कुछ हासिल नहीं होगा।" (बुख़ारीः 2053, मुस्लिमः 1457)

मुंदरजा बाला अहदीस और नुसूस नीज़ दूसरे दलाइल के पेश–ए–नज़र नसब के मुतअल्लिक़ फ़ुक़हा ने बहुत सी जुज़ईयात तहरीर फ़रमाई हैं, उनमें से चंद ज़रूरी अहकाम मुंदरजा ज़ेल हैंः

1– सुबूत–ए–नसब के मरातिबः

पहला मर्तबा यह है कि मर्द व औरत का निकाह हुआ हो तो अगर औरत के बच्चा पैदा हो तो वह उसके शौहर ही का समझा जाएगा, ख़्वाह वह दावा करे या न करे और अगर वह कहे कि बच्चा मेरा नहीं है तो महज़ इनकार से नसब की नफ़ी नहीं होगी, इसके लिए लिआन की ज़रूरत होगी। (हिंदियाः 1/536)

2– दूसरा मर्तबा यह है कि उम्मुल–वलद (वह बांदी जिससे एक बच्चा पहले पैदा हो चुका हो) के बच्चा पैदा हो तो आक़ा ख़्वाह दावा करे कि मेरा बच्चा है या न करे, बच्चा उसी का माना जाएगा। अलबत्ता इनकार कर दे कि बच्चा मेरा नहीं है तो लिआन के बग़ैर बच्चा के नसब की नफ़ी हो जाएगी। (ऐज़न)

3– तीसरा मर्तबा यह है कि आम बांदी से बच्चा पैदा हो तो उस बच्चा का नसब आक़ा से उसी वक़्त साबित होगा जब आक़ा दावा करे कि यह मेरा बच्चा है। (ऐज़न)

अब ग़ुलाम–बांदी का दौर ख़त्म हो चुका है, लिहाजा आख़िर की दो शक्लें नहीं मानी जा सकतीं, उनको यहां सिर्फ़ जानकारी के लिए बयान कर दिया गया है।

निकाह के बाद सबूत–ए–नसब की मुद्दतः

कोई शख़्स अगर किसी औरत से निकाह करे और उस औरत से निकाह के दिन से छह महीने या उसके बाद बच्चा पैदा हो तो यह बच्चा शौहर ही का माना जाएगा। शौहर इक़रार करे या न करे और अगर शौहर यह कहे कि बच्चा उस औरत से पैदा नहीं हुआ है तो अगर दाया या ज़चगी के अमूर को अंजाम देने वाली डॉक्टर उसकी गवाही दे दे तो इस एक औरत की गवाही सबूत–ए–नसब के लिए काफ़ी होगी। शौहर को अगर बच्चा का इनकार करना है तो उसको लिआन करना पड़ेगा और अगर बच्चा की विलादत निकाह के दिन से छह महीने से कम में हो तो उस बच्चे का नसब शौहर से नहीं समझा जाएगा। इसलिए कि हमल की कम से कम मुद्दत शरअन छह माह है, तो बच्चा अगर उससे पहले पैदा हुआ तो ज़ाहिर है कि वह निकाह से पहले का है, लिहाजा उसका नसब साबित नहीं होगा। (हिदाया मअ फ़तहुल क़दीरः 4/178, बाब सुबूत–अल–नसब, हिंदियाः 1/536)

मुंदरजा बाला अहकाम ही की बुनियाद पर फ़ुक़हा–ए–अहनाफ़ ने इसकी तसरीह की है कि अगर ज़ाहिरी तौर पर मियां–बीवी की मुलाक़ात सालों से न हुई हो तो भी अगर औरत के शादी के छह माह बाद बच्चा पैदा हो तो शरअन वह साबितुन्नसब होगा, इसलिए कि हदीस में "अल–वलदु लिल–फ़िराशि" (बच्चा फ़राश (यानी शौहर) का है) फ़रमाया गया। लिहाज़ा उस बच्चा के बारे में उल्टी–सीधी बातें करना जाइज़ न होगा, इसलिए कि अगरचे ज़ाहिरी तौर पर दोनों न मिले हों लेकिन हो सकता है किसी तरीक़े से ख़ुफ़िया तौर पर उनकी मुलाक़ात हुई हो जिसका इल्म लोगों को न हुआ हो, अगर बच्चा वाक़ई शौहर का न होगा तो वह खुद ही लिआन के ज़रिये उसकी नफ़ी कर देगा। (शामीः 3/500)

इसी तरह अगर किसी ने औरत से शादी की, फिर रुख़सती होने से पहले ही उसे तलाक़ दे दी तो अगर तलाक़ से छह महीने के अंदर–अंदर औरत के कोई बच्चा पैदा हो तो शरअन वह साबितुन्नसब होगा। बशर्ते कि निकाह को छह महीने या उससे ज़्यादा गुज़र चुके हैं। अगर शौहर को बच्चा की नफ़ी करना हो तो उसे लिआन करना होगा और अगर तलाक़ के छह महीने के बाद बच्चा पैदा हुआ तो उसका नसब उस साबिक़ा शौहर से साबित नहीं होगा। (रद्दुल मुख़्तार शामीः 3/542)

दो बुनियादी बातें

मौलाना अब्दुस्सुब्हान नाख़ुदा नदवी

अल्लाह रब्बुल–इज़्ज़त ने सूरह–ए–आराफ़ में हज़रत आदम (अलैहिस्सलाम) और इब्लीस का क़िस्सा बयान करने के बाद बनी–आदम को कुछ अहम हिदायात दी हैं। उनमें एक हिदायत "पाकीज़गी" की है। इरशाद है:

يَابَنِيْ آدَمَ قَدْ أَنزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُوَارِي سَوْءَاتِكُمْ وَرِيشًا وَلِبَاسُ التَّقْوَىٰ ذَٰلِكَ خَيْرٌ ذَٰلِكَ مِنْ آيَاتِ اللَّهِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ

"ऐ बनी आदम! हमने तुम पर लिबास उतारा जो तुम्हारी शर्मगाहों को छुपाता है और तुम्हारे लिए बाइस–ए–ज़ीनत भी है और तक़वे का लिबास सबसे बेहतरीन लिबास है और यह अल्लाह की निशानियाँ हैं, शायद कि वह ग़ौर–ओ–फ़िक्र से काम लें।" (अल–आराफ़: 26)

इसी के ज़िम्न में अल्लाह रब्बुल–इज़्ज़त ने हया के पैग़ाम को उतारा। हक़ीक़त में तौहीद के बाद जो तालीमात हज़रात–ए–अंबिया (अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम) की तरफ़ से चली आई हैं, उनमें सबसे बुनियादी तालीम "हया" की तालीम है। इरशाद–ए–रब्बानी है:

يَابَنِيْ آدَمَ لَا يَفْتِنَنَّكُمُ الشَّيْطَانُ كَمَا أَخْرَجَ أَبَوَيْكُم مِّنَ الْجَنَّةِ يَنزِعُ عَنْهُمَا لِبَاسَهُمَا لِيُرِيَهُمَا سَوْءَاتِهِمَا إِنَّهُ يَرَاكُمْ هُوَ وَقَبِيلُهُ مِنْ حَيْثُ لَا تَرَوْنَهُمْ إِنَّا جَعَلْنَا الشَّيَاطِينَ أَوْلِيَاءَ لِلَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ

"ऐ बनी आदम! हरगिज़ शैतान तुम्हें फ़ितने में मुब्तला न करे, जिस तरह उसने तुम्हारे माँ–बाप को जन्नत से निकाला था, उनके लिबास को उतारते हुए ताकि एक–दूसरे को उनकी शर्मगाहें दिखाए और शैतान और उसका पूरा टोला तुम्हें वहाँ से देखता है जहाँ से तुम उसे नहीं देखते हो और हमने शैतानों को उन लोगों का दोस्त बनाया है जिनमें ईमान नहीं है।" (अल–आराफ़: 27)

इसके बाद अल्लाह तआला ने बनी–आदम के नाम यह पैग़ाम दिया कि:

يَابَنِيْ آدَمَ إِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ رُسُلٌ مِّنكُمْ يَقُصُّونَ عَلَيْكُمْ آيَاتِي

"ऐ बनी आदम! जब कभी तुम्हारे पास तुमही में से रसूल आएँगे तो वे तुम्हारे सामने मेरी आयात को बयान करेंगे।"

इस आयत में गोया अल्लाह तआला की तरफ़ से पेशीनगोई की गई, बल्कि अल्लाह की तरफ़ से सराहतन ऐलान किया गया कि मैं रसूलों का सिलसिला जारी करूँगा और मेरे पैग़म्बर आकर मेरी आयात तिलावत करते रहेंगे। गोया अल्लाह की तरफ़ से यह ऐलान भी हुआ कि उन रसूलों पर अल्लाह की तरफ़ से हिदायात–ए–रब्बानी उतारी जाएँगी।

इसके बाद इसी आयत में तमाम इंसानों की ज़िम्मेदारियों को दो बुनियादी बातों में समेट कर बयान कर दिया गया। इरशाद हुआ:

فَمَنِ اتَّقَىٰ وَأَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

"तो जिसने तक़वा इख़्तियार किया और इस्लाह कर ली तो ऐसों पर न कोई डर है और न ही वह ग़मगीन होंगे।"

अल्लाह का डर और दिल में उसका ख़ौफ़ जिसे हम तक़वा और ख़शियत कहते हैं, इस्लाम में ग़ैर–मामूली अहमियत का हामिल है। जिस तरह ईमान की बुनियाद पर आमाल क़द्र–ओ–क़ीमत पाते हैं और अगर ईमान न हो तो बड़े से बड़ा अमल क़ाबिल–ए–क़ुबूल नहीं, इरशाद–ए–इलाही है:

أُولَٰئِكَ لَمْ يُؤْمِنُوا فَأَحْبَطَ اللَّهُ أَعْمَالَهُمْ

"ये लोग हरगिज़ ईमान नहीं लाए, बस अल्लाह ने उनके सब काम अकारत कर दिए।" (अल–अहज़ाब: 19)

ठीक इसी तरह ईमान के बाद तक़वा की बुनियाद पर भी आमाल क़ुबूल किए जाते हैं। इरशाद फ़रमाया:

إِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللَّهُ مِنَ الْمُتَّقِينَ

"बेशक अल्लाह तो परहेज़गारों ही से क़ुबूल फ़रमाते हैं।" (अल–माइदा: 27)

जिस दिन हमारे अंदर ख़ौफ़–ए–इलाही या तक़्वे की यह सिफ़त हक़ीक़ी मअनी में पैदा हो जाएगी तो हम दुनिया के हर कोने को अपने लिए मुबारक बना सकते हैं। हम मक्का–मदीना में हों या लंदन व पैरिस में, अगर हमारे दिल के अंदर अल्लाह का ख़ौफ़ है, हमारे सामने हुज़ूर–ए–अकरम (स0अ0व0) का यह फ़रमान है:

اِتَّقِ اللّٰہَ حَیْثُمَا کُنْتَ

"तुम जहाँ कहीं भी रहो, ख़ुदा का ख़ौफ़ इख़्तियार करो।"

अगर हमारे अंदर यह जज़्बा है तो हम अपने हर लम्हे को क़ीमती बना सकते हैं। अगर हम अच्छे मक़ामात पर होंगे तो हमारी ज़िंदगी और बेहतर बना दी जाएगी और अगर हम ग़लत मक़ामात पर भी रहेंगे तो ख़ुदा के दीन और तक़्वे के चराग़ को रोशन करते हुए हम अच्छी ज़िंदगी बसर करने वाले बनेंगे।

ख़ौफ़–ए–ख़ुदा का यह जज़्बा अपने अंदर पैदा करने के साथ पूरी इंसानियत के लिए आम करना हम सब की ज़िम्मेदारी है। इसी को ऊपर आयत में "इस्लाह" के अमल से ताबीर किया गया है। आदमी जहाँ कहीं भी रहे तो उसकी ज़िम्मेदारी है कि इस्लाह का काम करे। उसकी ज़िम्मेदारी है कि उसके अंदर जो सलाहियत हो, उसके ज़रिए इस्लाह का काम करने की कोशिश करे। अगर कोई ऐसा करता है तो अल्लाह की तरफ़ से साफ़ ऐलान है कि उसके लिए हर तरह का ख़ौफ़ उड़ा दिया जाएगा, उसके लिए हर तरह के टेंशन को ख़त्म कर दिया जाएगा। फ़रमाया:

فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

"ऐसों पर न कोई डर है और न ही वे ग़मगीन होंगे।"

आख़िरत के लिहाज़ से ख़ौफ़–ओ–ग़म का तो कोई नाम–ओ–निशान ही नहीं होगा। हालांकि अगर कोई दुनिया में भी इस तरह की ज़िंदगी बसर करेगा तो उसको ख़ौफ़–ए–ख़ुदा के अलावा किसी का ख़ौफ़ बाक़ी नहीं रहेगा। इसमें शुब्हा नहीं कि उन पर भी ग़म आते हैं और ग़म आएँगे, लेकिन वे हर ग़म को तक़र्रुब–ए–इलल्लाह का ज़रिया बनाएँगे और जो चीज़ तक़र्रुब–ए–इलल्लाह का ज़रिया बनती है, वह ग़म नहीं रहती बल्कि वह तो एक क़िस्म की ख़ुशख़बरी है।

हममें से हर फ़र्द सबसे पहले अपनी इस्लाह की फ़िक्र करे और इस सिलसिले में कभी ग़फ़लत का शिकार न हो। हर इंसान दुनिया भर की आँखों में धूल झोंक सकता है लेकिन ख़ुद को धोखा कभी नहीं दे सकता। अगर आदमी का दिल ज़िंदा है और वह मुसलसल अपना जायज़ा लेता रहे तो उसके अंदर इस्लाह का जज़्बा हमेशा बाक़ी रहेगा। अगर आप पर लोग तनक़ीद करें तो उसको भी अपनी इस्लाह का ज़रिया बनाइए। याद रखें! जिस दिन आपने यह समझ लिया कि हम दर्जा–ए–कमाल को पहुँच गए, तो उसी दिन से आपका ज़वाल शुरू हो जाएगा। हर इंसान अपनी इस्लाह का मोहताज है। उसके साथ जो उससे मुतअल्लिक़ लोग हैं, उनकी इस्लाह भी उसकी ज़िम्मेदारी है। यह ऐसा मुबारक अमल है जो तसलसुल चाहता है और अगर यह काम पायदारी से होता रहे तो फिर अल्लाह का अज़ाब कभी नहीं आता। ख़ुदा का कलाम इसकी गवाही देता है:

وَمَا كَانَ رَبُّكَ لِيُهْلِكَ الْقُرَى بِظُلْمٍ وَأَهْلُهَا مُصْلِحُونَ

"और आपका रब ऐसा है ही नहीं कि ज़बरदस्ती किसी बस्ती को तबाह कर दे, जब तक कि वहाँ के लोग इस्लाह का अमल करते रहें।"

इस्लाह का यह अमल हमें उस वक़्त तक करना है जब तक हमारी आख़िरी साँस न आ जाए और हम अल्लाह के दरबार में हाज़िर न हो जाएँ:

إِنْ أُرِيدُ إِلَّا الْإِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ وَمَا تَوْفِيقِي إِلَّا بِاللَّهِ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ أُنِيبُ

"मैं तो सिर्फ़ इस्लाह चाहता हूँ जितना भी मैं कर सकूँ और मुझे तौफ़ीक़ अल्लाह ही की तरफ़ से मिलती है। उसी पर मैंने भरोसा किया और उसी की तरफ़ मैं रुजू करता हूँ।" (हूद: 88)

हम मुसलमानों और ख़ास तौर पर तबक़ा–ए–उलमा की ज़िम्मेदारी है कि अल्लाह के रसूल (स0अ0व0) की इंसानियत–नवाज़ तालीमात को लें और बंदगान–ए–ख़ुदा तक पहुँचाएँ। हम यह समझें कि इस वक़्त दुनिया की तमाम क़ौमें हमारे सामने कासा–ए–गदाई लिए हुए खड़ी हैं। हमारा फ़र्ज़ है कि इस कटोरे को मोहसिन–ए–इंसानियत (स0अ0व0) के फ़ैज़ से भर दें और हम दुनिया के फ़क्र को दूर करें।

अगर हमने ऐसा कर लिया तो अल्लाह की तरफ़ से रहमतें नाज़िल होंगी और हम उसकी तरफ़ से करम–ए–मुसलसल का मुशाहदा करते रहेंगे।

समाज और नवजवान

मौलाना नासिरुद्दीन नदवी प्रतापगढ़ी

हर क़ौम की ज़िंदगी में नौजवान रीढ़ की हड्डी की हैसियत रखते हैं। क़ौमों की इज़्ज़त–ओ–अज़्मत, तरक़्क़ी–ओ–बुलंदी और क़ियादत–ओ–सियादत का इन्हिसार इसी तबक़े पर होता है। नौजवानों का जोश–ओ–वलवला, क़ुर्बानी–ओ–ईसार, जद्द–ओ–जहद और ख़ुलूस ही दरअसल क़ौम की रूह होता है। अगर नौजवान बेदार–ओ–बाख़बर हों, बा–अख़्लाक़–ओ–बा–किरदार हों और मक़सद–ए–ज़िंदगी से आगाह हों तो समाज ख़ुशहाल, सालेह और तरक़्क़ीयाफ़्ता हो जाता है, लेकिन अगर यही नौजवान बेराह–रव, ग़ाफ़िल–ओ–बेपरवाह, नासमझ और ख़ुदग़र्ज़ हों तो पूरा समाज तबाही के दहाने पर पहुँच जाता है।

हम जिस समाज में जी रहे हैं, वह बहुत से दाख़िली और ख़ारिजी मसाइल से दोचार है। अख़्लाक़ी इन्हितात, दीनी कमज़ोरी, मआशी मसाइल, तालीमी पसमान्दगी और तहज़ीबी शिकस्तगी का गहरा असर आज के नौजवानों पर पड़ रहा है। हमारे नौजवानों की बड़ी तादाद बेमक़सद, वक़्तगुज़ारी, नशाख़ोरी, अश्लीलता, फ़िल्मबीनी, गानों और सोशल मीडिया के फ़ितनों में ग़र्क़ हो चुकी है। तालीम और मेहनत से गुरेज़, दीन से दूरी, बड़ों की नाफ़रमानी और दीनी इक़दार से बेज़ारी आम होती जा रही है। ऐसे माहौल में अगर नौजवान ख़ुद को न सँभालें तो न सिर्फ़ वे अपनी ज़िंदगी बर्बाद कर बैठेंगे बल्कि पूरा मुआशरा गुमराही और तनज़्ज़ुली की गहरी खाई में गिर जाएगा।

अभी वक़्त है कि नौजवान ख़ुद को पहचानें, अपनी अहमियत और टैलेंट को समझें, ख़ुदा की अता–कर्दा सलाहियतों का दुरुस्त इस्तिमाल करें। नौजवानों को यह जानना होगा कि वे किसी मामूली मख़्लूक़ का नाम नहीं बल्कि वे इस्लाम के अलमबरदार, मिल्लत के मेअमार और क़ौम के निगहबान हैं। उनके अंदर वह क़ूव्वत है जो समाज को बदल सकती है, उम्मत को जगा सकती है, दीन की सरबुलंदी और इंसानियत की फ़लाह का ज़रिया बन सकती है। मगर यह सब कुछ तभी मुमकिन है जब वे इल्म हासिल करें, अमल से जुड़ें, अख़्लाक़ को अपनाएँ, किरदार को पाकीज़ा रखें, दीन से मुहब्बत करें और अपने वक़्त को क़ीमती बनाएँ।

नौजवानों को चाहिए कि अपने वक़्त का दुरुस्त इस्तिमाल सीखें, किताबों से रिश्ता जोड़ें, उलमा–ए–दीन से रहनुमाई लें, रिफ़ाही ख़िदमात, इस्लाही तंज़ीमों, तालीमी और फ़िक्री सरगर्मियों में हिस्सा लें। अपने अंदर क़ियादत–ओ–ख़ुलूस, तहम्मुल–ओ–क़ुर्बानी और सब्र जैसे औसाफ़ पैदा करें। असहाब–ए–कहफ़ की तरह बातिल के ख़िलाफ़ डटने वाले हों, हज़रत अली (रज़ि0) और हज़रत उसामा (रज़ि0) की तरह बहादुर बनें, अपनी ज़िम्मेदारी के तईं मुख़लिस हों, हज़रत मुसअब बिन उमैर (रज़ि0) की तरह दावत के लिए हर तरह की क़ुर्बानी देने वाले हों।

आज का नौजवान अगर चाहे तो फ़ित्ना–ए–बातिल के इस तूफ़ान का रुख़ मोड़ सकता है। अगर अल्लाह के दीन की सरबुलंदी के लिए वक़्त निकाले, अपनी तवानाई को हक़–ओ–सदाक़त के लिए खपाए तो वह मुआशरे में रोशनी का चराग़ बन सकता है। नबी करीम (स0अ0व0) ने सहाबा–ए–किराम (रज़ि0) की ऐसी ही तरबियत की। उनके दिलों में अल्लाह का ख़ौफ़, आख़िरत का यक़ीन, इंसानों की ख़िदमत का जज़्बा और दुनिया की बे–सबाती का शऊर पैदा किया। यही वह फ़िक्र है जो आज के नौजवानों को दरकार है।

समाज के हर एक पर भी यह ज़िम्मेदारी आइद होती है कि वह अपने बच्चों, नौजवानों की सही तरबियत करे, उन्हें इल्म–ओ–हिकमत, किरदार–ओ–अख़्लाक़, दीनी शऊर और क़ौमी ग़ैरत से आरास्ता करे। तालीमी इदारे हों या दीनी मराकिज़, स्कूल–ओ–कॉलेज हों या यूनिवर्सिटी, वालिदैन–ओ–सरपरस्त हों या उलमा–ओ–दानिश्वर, हर किसी को अपना किरदार अदा करना होगा। नौजवानों को सिर्फ़ नसीहत से नहीं बल्कि मुहब्बत, अमली रहनुमाई और मिसाली किरदार से मुतअस्सिर किया जा सकता है।

जम्हूरियत
ख़ुदकुशी की राह पर

सैय्यद मुहम्मद मक्की हसनी नदवी

हिंदुस्तान को दुनिया की सबसे बड़ी जम्हूरियत कहा जाता है। आज़ादी के बाद 26 जनवरी 1950 ई० को नाफ़िज़ होने वाले आईन ने इस मुल्क को एक ऐसी जम्हूरी रियासत की हैसियत अता की जिसकी बुनियाद अवाम की हाकिमियत, क़ानून की बालादस्ती, बुनियादी हुक़ूक़, आज़ाद अदलिया, वफ़ाक़ी निज़ाम, आज़ाद इंतिख़ाबात और मज़हबी आज़ादी जैसे उसूलों पर रखी गई। तवील अरसे तक हिंदुस्तान की जम्हूरियत को तरक़्क़ीयाफ़्ता मोमालिक के लिए एक कामयाब नमूना क़रार दिया जाता रहा। मुख़्तलिफ़ सियासी जमाअतों के दरमियान इक़्तिदार की पुरअमन मुंतक़िली, मज़बूत इंतिख़ाबी निज़ाम और आईनी इदारों की फ़आलियत को इस कामयाबी की अलामत समझा जाता था।

इक्कीसवीं सदी ख़ुसूसन गुज़िश्ता एक दहाई में हिंदुस्तानी जम्हूरियत की नई शक्ल ने जन्म लिया है। मौजूदा सियासी जमाअत के इक़दामात जम्हूरियत के उसूलों को कमज़ोर करते जा रहे हैं, जबकि यही लोग इन इक़दामात को क़ौमी सलामती, बेहतर हुक्मरानी, तरक़्क़ी और बदउनवानी के ख़ात्मे के लिए ज़रूरी क़रार देते हैं।

हिंदुस्तान के आईन–साज़ों ने एक ऐसा निज़ाम तश्कील दिया जिसमें हर शहरी को मुसावी हुक़ूक़ हासिल हों। हुकूमत अवाम के सामने जवाबदेह हो। अदलिया आज़ाद हो और पार्लियामेंट अवाम की हक़ीक़ी नुमाइंदा हो। आज़ादी के बाद कई दहाइयों तक मुख़्तलिफ़ जमाअतें इक़्तिदार में आती और जाती रहीं जिससे यह तसव्वुर मज़बूत हो कि हिंदुस्तानी जम्हूरियत मुस्तहकम बुनियादों पर क़ायम है।

जम्हूरियत सिर्फ़ इंतिख़ाबात का नाम नहीं बल्कि इख़्तिलाफ़–ए–राय का एहतिराम, इदारों की ख़ुदमुख़्तारी, आज़ाद मीडिया, शफ़्फ़ाफ़ एहतिसाब और आईन की बालादस्ती भी इसके लाज़िमी अनासिर हैं। जब इन उसूलों में कमज़ोरी पैदा होती है तो जम्हूरियत का ढाँचा भी मुतास्सिर होता है।

हिंदुस्तानी जम्हूरियत की तारीख़ में 25 जून 1975 ई० का दिन एक अहम मोड़ समझा जाता है। उस वक़्त की वज़ीर–ए–आज़म इंदिरा गांधी ने मुल्क में इमरजेंसी नाफ़िज़ कर दी। बुनियादी हुक़ूक़ मुअत्तल कर दिए गए। हज़ारों सियासी रहनुमाओं को गिरफ़्तार किया गया। अख़बारात पर सेंसरशिप नाफ़िज़ हुई और हुकूमत पर तनक़ीद तक़रीबन नामुमकिन हो गई।

इमरजेंसी सिर्फ़ इक्कीस माह जारी रही लेकिन उसने यह साबित कर दिया कि जम्हूरी इदारे भी ग़ैर–मामूली सियासी ताक़त के सामने कमज़ोर पड़ सकते हैं। बाद अज़ाँ इंतिख़ाबात हुए और हुकूमत तब्दील हुई जिसे जम्हूरियत की बहाली क़रार दिया गया।

2014 ई० के बाद हिंदुस्तान की सियासत में एक नया दौर शुरू हुआ। मज़बूत अक्सरियती हुकूमत ने मुतअद्दिद अहम फ़ैसले किए। हुकूमत का मौक़िफ़ था कि मज़बूत मैनडेट (पार्लियामानी अक्सरियत) से तेज़ रफ़्तार इस्लाहात मुमकिन हो सकती हैं, जबकि इक़्तिदार का ग़ैर–मामूली इर्तिकाज़ पार्लियामानी मुबाहिसे और वफ़ाक़ी तवाज़ुन को कमज़ोर कर रहे हैं। पार्लियामेंट में कई अहम क़वानीन महदूद बहस के साथ मंज़ूर किए गए। अपोज़िशन का कहना था कि पार्लियामानी कमेटियाँ हुकूमत के मैलान के साथ काम कर रही हैं।

8 नवंबर 2016 ई० को हुकूमत ने अचानक बड़े करेंसी नोट मंसूख़ करने का ऐलान किया। हुकूमत के मुताबिक़ इस इक़दाम का मक़सद काले धन, जाली करेंसी और दहशतगर्दी की माली मुआवनत पर क़ाबू पाना था लेकिन इस फ़ैसले से लाखों मज़दूर, छोटे ताजिर और देहाती मआशियत शदीद मुतास्सिर हुई। इस वाक़्ये ने साबित कर दिया कि जब हुकूमत को मुकम्मल बालादस्ती मिल जाती है तो फिर वह किसी की परवाह किए बग़ैर अपना फ़ैसला थोप देती है।

5 अगस्त 2019 ई० को हुकूमत ने जम्मू–कश्मीर की ख़ुसूसी आईनी हैसियत ख़त्म कर दी। हुकूमत ने इसे क़ौमी इत्तिहाद, तरक़्क़ी और मुकम्मल इल्तिहाक़ की जानिब तारीख़ी क़दम क़रार दिया और यह फ़ैसला हुकूमत ने रियासती असेंबली की अदम मौजूदगी, मुक़ामी क़यादत की गिरफ़्तारी, मवासलाती पाबंदियों और तवील इंटरनेट बंदी के साथ लिया ताकि कोई उसके इस फ़ैसले के ख़िलाफ़ अपनी बात न रख सके, यह जम्हूरियत को क़त्ल करने की तरफ़ इक़दामात हैं।

2019 ई० में मंज़ूर होने वाला शहरीयत तरमीमी क़ानून मुल्क भर में शदीद सियासी मुज़ाहमत का सबब बना, हुकूमत के मुताबिक़ इस क़ानून का मक़सद पड़ोसी

मोमालिक में मज़हबी ज़ुल्म का शिकार बाज़ अक़ल्लियतों को शहरीयत देना था।

सच्चाई यह है कि मज़हब की बुनियाद पर शहरीयत क़ानून आईन के उसूल की ख़िलाफ़वर्ज़ी है, इसके ख़िलाफ़ मुल्क के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में बड़े पैमाने पर एहतेजाज हुए जिनमें तलबा, ख़्वातीन और समाजी कारकुनों ने हिस्सा लिया, हुकूमत ने वाज़ेह किया कि यह क़ानून किसी हिंदुस्तानी शहरी की शहरीयत छीनने के लिए नहीं लेकिन यह हुकूमत की रेशा–दवानियाँ हैं।

2020 ई० में तीन ज़रई क़वानीन मंज़ूर किए गए। हुकूमत ने उन्हें ज़रई इस्लाहात क़रार दिया लेकिन लाखों किसानों ने इन क़वानीन के ख़िलाफ़ तारीख़ी एहतेजाज किया। दिल्ली की सरहदों पर कई माह तक जारी रहने वाले मुज़ाहिरों के बाद हुकूमत ने 2021 ई० में ये क़वानीन वापस ले लिए।

यह वाक़्या इस बात की अलामत बना कि जम्हूरियत में अवामी एहतेजाज पॉलिसी–साज़ी पर असरअंदाज़ हो सकता है लेकिन इस दौरान एहतेजाज, मुज़ाकरात और हुकूमती रवैये पर शदीद तनक़ीद हुई।

इन्फ़ोर्समेंट डायरेक्टोरेट (ED), सीबीआई (CBI) और इनकम टैक्स महकमे इस हुकूमत के लिए ऐसे हैं जैसे माज़ी में किसी पार्टी के छुपे हुए गुंडे हुआ करते थे। अब इन तमाम महकमों को अपोज़िशन जमाअतों और सियासी मुख़ालिफ़ीन के ख़िलाफ़ इस्तेमाल किया जा रहा है, ये कारवाइयाँ मुख़ालिफ़ीन को उस वक़्त तक दहशत में डालती हैं जब तक वे मुख़ालिफ़ीन इनकी जमाअत में शामिल नहीं हो जाते।

जम्हूरियत में एहतिसाब ज़रूरी है। हुकूमत जो करे उसकी जवाबदेही जम्हूरियत को बरक़रार रखती है। हाल ही में जंतर–मंतर पर तलबा और अवाम ने जो एहतेजाज किया वह इसकी आला मिसाल है। जब हुकूमत जवाबदेही के लिए तैयार न हो तो बाशऊर अवाम को बाहर निकलना होगा और हुकूमत पर दबाव बनाकर जवाबदेही के लिए तैयार करना होगा।

मीडिया को जम्हूरियत का चौथा सुतून कहा जाता है लेकिन जब तक वह आज़ाद हो, गुज़िश्ता बरसों में इस हुकूमत ने मीडिया के बड़े इदारों को मुख़्तलिफ़ हथकंडों से ख़रीद लिया और जो सहाफ़ी इनकी हिमायत के लिए राज़ी न हुआ उसको मरकज़ी धारे से हटा दिया, अब उनकी क़िस्मत में एक अलग यूट्यूब चैनल ही रह गया है, अब असल मीडिया में वही लोग रह गए हैं जिनको हुकूमत से जो हुक्म कराया जाता है वही कहते हैं।

सोशल मीडिया, इंटरनेट जम्हूरियत का वह सुतून है जहाँ इज़हार–ए–राय की आज़ादी होती है लेकिन मौजूदा हुकूमत अपनी मुख़ालिफ़त को रोकने के लिए जम्हूरियत के इस सुतून को ढाने का काम कर रही है।

सुप्रीम कोर्ट और हाईकोर्ट हिंदुस्तानी आईन के मुहाफ़िज़ समझे जाते हैं। हालिया बरसों में अदलिया के बाज़ फ़ैसलों को जम्हूरी निज़ाम के लिए अहम क़रार दिया गया जबकि बाज़ मामलात में ताख़ीर या हस्सास मुक़दमों की समाअत में मौजूदा हुकूमत की रज़ामंदी शामिल–ए–हाल रही।

इसी तरह इलेक्शन कमीशन, पार्लियामेंट, इत्तिलाआती कमीशन और दीगर आईनी इदारों की जानिबदारी साबित हुई है।

इंतिख़ाबी बॉन्ड स्कीम सियासी फ़ंडिंग में एक अहम तब्दीली थी। हुकूमत ने इसे शफ़्फ़ाफ़ियत और रस्मी–माली निज़ाम को फ़रोग़ देने का ज़रिया क़रार दिया, जबकि नाक़िदीन ने कहा कि इससे अतिया दहिंदगान की मालूमात अवाम से पोशीदा रहती हैं और सियासी मुसावात मुतास्सिर हो सकती है। इस मौज़ू पर अदालती कार्रवाईयों ने सियासी फ़ंडिंग के निज़ाम पर नई बहस को जन्म दिया।

हिंदुस्तानी जम्हूरियत की तारीख़ कामयाबियों और आज़माइशों दोनों से इबारत है। 1975 ई० की इमरजेंसी से लेकर हालिया बरसों के आईनी, सियासी और समाजी वाक़्यात तक मुतअद्दिद ऐसे मराहिल आए जिन्होंने जम्हूरियत पर कारी ज़रब लगाई है लेकिन अगर जम्हूरी इदारे और शोबों में तवाज़ुन क़ायम रहा तो हिंदुस्तान अपनी जम्हूरी रिवायत को मज़ीद मज़बूत बना सकता है।

एक हक़ीक़त बहरहाल वाज़ेह है कि जम्हूरियत सिर्फ़ इंतिख़ाबात के इनइक़ाद से ज़िंदा नहीं रहती बल्कि इसकी बक़ा आईन की बालादस्ती, क़ानून की मुसावी हुक्मरानी, आज़ाद अदलिया, मज़बूत पार्लियामेंट, आज़ाद मीडिया, जवाबदेह हुकूमत और बाशऊर अवाम पर मुनहसिर होती है। हिंदुस्तान की जम्हूरियत का मुस्तक़बिल भी इन्हीं उसूलों की मज़बूती या कमज़ोरी से तय होगा। यही वह अवामिल हैं जो न सिर्फ़ हाल को बल्कि आने वाली नस्लों के मुस्तक़बिल को भी तश्कील देंगे।

इल्हाद का तूफ़ान – सबब और हल

मोहम्मद नज्मुद्दीन नदवी

मुस्लिम फ़िलासफ़र्स की फ़िक्र व नज़र और उनके रुझान व इस्तदलाल के पस–मंज़र और मनबअ–ओ–मस्दर में वही–ए–इलाही को बुनियादी मस्दर–ए–इल्म और असास–ए–इरफ़ान की हैसियत हासिल है। इमाम अबुल हसन अशअरी इल्म उल–कलाम में अशाअराह मकतब–ए–फ़िक्र व नज़र के असास गुज़ार हैं। उन्होंने इल्म व फ़िक्र और फ़लसफ़ा के चराग़ की वही से रोशनी हासिल की और वही को अक़्ल व ख़िरद पर बरतरी और फ़ौक़यित दी। यही अशआराह का नज़रिया है, क्योंकि यह वो फ़लसफ़ा है कि मअरिफ़त–ए–हक़ अक़्ल व ख़िरद के ज़रिये मुमकिन नहीं और यह कि हरदम मुतग़य्यिर थे ख़िरद के नज़रियात। वही को मस्दर–ए–इल्म जानने और समझने में जहाँ आफ़ियत है वहीं फ़ितरत का तक़ाज़ा भी है और इस तरह इंसान को किसी ग़ैर की जुस्तजू आवारा नहीं रखेगी। इस्लाम अक़्ल व ख़िरद और शऊर की हौसला अफ़ज़ाई ज़रूर करता है लेकिन अक़्ल की तक़दीर में वही–ए–इलाही और आयात–ए–बय्यिनात की रहनुमाई नहीं होती। फ़िलासफ़ा अक़्ल व ख़िरद को ज़्यादा अहमियत देने के बावजूद साफ़ नज़र आता है कि उनके नज़रयात एक दूसरे से टकराते हैं और अक़्ल व ख़िरद के नज़रियात हरदम मुतग़य्यिर होते हैं। बा–ई–हमह मअरिफ़त व इदराक–ए–हक़ीक़त के लिए अक़्ल पर कुल्ली एतमाद बड़ी लग़्ज़िश और फ़िक्री व ज़ेहनी बे–राह–रवी समझी जाएगी। इसलिए कि इस सिलसिला में अक़्ल व ख़िरद का सहारा काफ़ी नहीं है। यही वजह है कि जर्मनी के मशहूर फ़लसफ़ी कांट ने अपना नज़रिया पेश करते हुए यहाँ तक कहा कि अक़्ल–ए–महज़ का वजूद ही नामुमकिन है और अक़्ल–ए–महज़ ख़ाम ख़्याल है। यह बात उसने Critique of pure reason में तहरीर की है। जब ज़िंदगी और कायनात के हवाला से अक़्ल व ख़िरद का यह हाल है तो मा–बअद–उत–तबीआयाती दुनिया तक इसकी रसाई बिल्कुल नामुमकिन और मुहाल है। यह बात भी गुज़र चुकी है कि हुसूल–ए–इल्म व मअरिफ़त के असबाब व वसाइल में एक तजरबा भी है। साइंस ने इसमें बड़ी अहमियत दी है क्योंकि इसमें तजज़िया और तर्जुबा के ज़रिया नतीजा तक पहुँचने की सई की जाती है। इसीलिए साइंस तर्जुबा व तजज़िया के सहारे हक़ीक़त के इदराक व मअरिफ़त तक वसूल चाहती है लेकिन यह भी एक ना–क़ाबिल–ए–इनकार हक़ीक़त है कि जो शय उसके इदराक व तर्जुबा में न आए उसका इनकार कर देती है, यही वजह है कि उसको हक़ीक़त के पाने में असास व बुनियाद गरदानना मुमकिन नहीं। बीसवीं सदी के आग़ाज़ में फ्रांस में एक फ़लसफ़ी हुआ है जिसका नाम हेनरी बर्गसां है, उसने अक़्ल व ख़िरद के सहारे हक़ीक़त की तलाश का इनकार करके विजदान का सहारा लिया और उस पर एतमाद किया है और डार्विन के नज़रिये–ए–इरतिक़ा पर भी उसने नक़्द किया है। उसने अपने इस नज़रिये को Creative evolution में पेश किया है और बड़ी अहम बात कही है कि "विजदान अक़्ल से अमीक़तर चीज़ है।" दौर–ए–जदीद के ज़ेहनों ने इसके ज़रिया रोशनी और बा–मक़सद व कामयाब ज़िंदगी की शाहराह तलाश की, वहाँ यह साइंस पर्दा बन कर हाइल रही, क्योंकि मा–बअद–उत–तबीआत, वही–ए–इलाही, अक़ीदा–ए–तौहीद, अक़ीदा–ए–रिसालत और अक़ीदा–ए–मुजाज़ात जैसे अहम मुबाहिस के लिए इलाही हिदायत (Divine Guidance) और आसमानी सहाइफ़ के बग़ैर हक़ीक़ी इल्म और सही रहनुमाई हासिल नहीं होती। वक़्त के गुज़रने के साथ टी. एच. हक्सले की बात भी तारीख़ के कबाड़–ख़ाना में पड़ी रह जाएगी कि "मज़हब आख़िरी तौर पर शिकस्त खाकर अखाड़े से निकल चुका है", यहाँ पर इस बात का इज़हार ग़ैर–महल नहीं कि कांट ने जो फ़लसफ़ा पेश किया था। उससे सात सौ साल पेशतर इसी तरह का नज़रिया पेश किया था कि अक़्ल का दायरा–ए–कार महदूद है और वो ग़ैर–मज़हर और मा–फ़ौक़–मज़हर को न तो समझ सकती है और न इसका बयान कर सकती है, यह वही का दायरा–ए–कार है। इस बात को सदियों बाद कांट ने भी कहा और चूंकि

उसके निज़ाम–ए–फ़लसफ़ा में वही की कोई हैसियत नहीं, क्योंकि वो एक नसरानी है, इसलिए उसने Practical Reason के अल्फ़ाज़ को इस्तेमाल किया है। ऊपर इमाम अबुल हसन अशअरी के हवाला से लिखा गया है कि अक़्ल व शऊर पर वही को फ़ौक़ियत दी, उन्होंने लिखा है कि "हमारा अक़ीदा जिसके हम क़ाइल हैं और हमारा मसलक जिस पर हम क़ाइम हैं, यह है कि कुरआन–ए–मजीद और सुन्नत–ए–रसूल को मज़बूत पकड़ा जाए और सहाबा व ताबेईन और अइम्मा–ए–हदीस से जो मनकूल है, उसको इख़्तियार किया जाए, हम इसी मसलक पर मज़बूती से क़ाइम हैं।" (किताबुल–अबाना अन उसूलुद्दियानाः 8)

मौलाना अबुल हसन अली नदवी ने इमाम अशअरी के तज़किरा में उनके अक़ीदे व नज़रिये की वज़ाहत में लिखा है कि इमाम अबुल हसन अशअरी खुद इस बात के क़ाइल व दाई होने के बावजूद अक़ाइद का माख़ज़ और इलाहयात व मा–बअद–उत–तबीआयाती मसाइल के इल्म उल–कलाम का सरचश्मा किताब व सुन्नत और तालीमात–ए–नबुव्वत है, न कि अक़्ल–ए–मुजर्रद और क़यासात या यूनानी इलाहियात, इस ख़्याल से मुत्तफ़िक़ नहीं थे कि ज़माने के असरात से या दूसरी क़ौमों और फ़लसफ़ों के इख़्तिलात से अक़ाइद के बारे में जो मसाइल छिड़ गए हैं और उनकी बुनियाद पर मुस्तक़िल फ़िर्क़े बन गए हैं। उनसे सिर्फ़ इस बिना पर सुकूत किया जाए कि हदीस में इन मसाइल व मुबाहिस और अल्फ़ाज़ व इस्तिलाहात का ज़िक्र नहीं है, उनके नज़दीक इससे सुन्नत व शरीअत के वक़ार को नुक़सान पहुंचेगा और इसको उनकी शिकस्त और कमज़ोरी पर महमूल किया जाएगा। नीज़ फ़िरक़ा–ए–बातिला को जो अक़्ली इस्तदलाल और फ़लसफ़ा की इस्तिलाहात से काम ले रहे हैं, खुद अहले–सुन्नत के अंदर नुफ़ूज़ करने और उनके नौजवान और ज़हीन उन्सर को अपनी तरफ़ माइल करने का मौक़ा मिलेगा। उनके नज़दीक अक़ाइद का माख़ज़ यक़ीनन वही व नबुव्वत–ए–मुहम्मदी है और इसका ज़रिया–ए–इल्म किताब व सुन्नत और सहाबा–ए–किराम के अक़वाल व रिवायात हैं।" (तारीख़–ए–दावत व अज़ीमतः 1/109–110)

इससे साफ़ मालूम हुआ कि मज़हब उस वक़्त तक मज़हब नहीं बन सकता जब तक कि उसके मालूमात की असास व बुनियाद अक़्ल व ख़िरद और हवास के बजाए वही व इल्हाम और अल्लाह तआला के ग़ैर–महदूद इल्म पर न रखी जाए। अगर दुनिया में कहीं ऐसा है तो यह हक़ीक़त मानी जाएगी कि वो मज़हब नहीं बल्कि उसकी हैसियत सिर्फ़ एक फ़लसफ़ा की है। इसलिए हम यह कह सकते हैं कि वही व खुदाई इल्म के सहारा के बग़ैर और उससे रिश्ता तोड़ कर बारी तआला को मानना किसी वहम–परस्ती से उसकी कोई हैसियत नहीं। मौलाना शिबली नोमानी ने प्रोफ़ेसर लीटर की यह बात नक़ल की है कि "मज़हब का सरचश्मा रोज़–बरोज़ वसी से वसीतर होता जा रहा है, फ़लसफ़ियाना फ़िक्र और ज़िंदगी के दर्दनाक तजुर्बे इसको और गहरा कर रहे हैं, इंसानियत की ज़िंदगी मज़हब ही से क़ाइम है और उसी से वो कुव्वत पाएगी।" (अल–कलाम)

इंसान की फ़ितरत और ज़ेहन में उभरने वाले मज़हबी सवालात के हल की इसी फ़ितरी राह का नाम हज़ारों साल से क़ाइम है। जब भी इंसानी फ़ितरत में इर्तेआश हुआ, इसी फ़ितरी राह ने तसकीन व सुकून अता की और सोचने की बात है कि प्यास लगी हो और उसको बुझाने का सामान न किया जाए तो यह नामुमकिन और मुहाल बात होगी। इसलिए इस फ़ितरी राह को जिसे "वही व नबुव्वत" से ताबीर किया जाता है, तमाम ला–यनहल उक़्दों की गिरह–कुशाई की है। जिनका इन मसाइल व उमूर और ज़ेहन व फ़ितरत में उभरने वाले सवालों का तशफ़्फ़ी–बख़्श हल अक़्ल व हवास और विजदान के गोशा में नहीं है, क्योंकि फ़ितरी सलाहियत से गुरेज़ करके कुदरती क़ानून को तोड़ने की कोशिश की और उन्होंने वही और नबुव्वत से नाता तोड़ कर इन सवालों के जवाबात की कोशिश की तो नतीजा ज़ाहिर है कि क्या क्या गुल–अफ़शानियाँ और क़यास–आराइयाँ व मू–शिगाफ़ियाँ करके और ज़्यादा मुश्किल बना दिया। कुरआनी ज़बान में इनको औहाम से ताबीर व तशरीह कर सकते हैं और इन अहले– अक़्ल व ख़िरद, अहले–विजदान और साइंसदानों ने अपने इल्म के यक़ीनी और क़तई होने का कभी इज़हार व ऐअतिराफ़ नहीं किया है, साथ ही यह भी वाज़ेह है कि उनके इल्म व फ़िक्र, ग़ौर व फ़हम के नतीजे यक्सां और एक नहीं बल्कि उनमें तआरुज़ और तज़ाद है, मुख़्तसर यह कि उन्होंने नज़रियात व तसव्वुरात के जंगलात में आबला–पाई की है। वो इंसानी अक़्ल व फ़हम के अजाइबात में से है और वही और नुबूव्वत ही इसका तशफ़्फ़ी बख़्श हल और उसके बुलन्द मक़ाम पर खड़े अम्बिया ही अस्ल रहनुमा है।

उक़ाबी रूह जब बेदार होती है जवानों में

मुहम्मद अमीन हसनी नदवी

इंसानी ज़िंदगी का सबसे नाज़ुक दौर जवानी का दौर होता है। यह वह दौर है जिसमें एक तरफ़ जज़्बात का सैलाब इसके अंदर मौजज़न होता है तो दूसरी तरफ़ ज़िम्मेदारियों का बोझ भी इसके कांधे पर होता है। एक तरफ़ अगर ताक़त के बल पर हर चीज़ हासिल कर लेने का जोश होता है तो दूसरी तरफ़ इसके नताइज भी निगाहों में गर्दिश कर रहे होते हैं। एक तरफ़ अगर इक़दाम का जज़्बा होता है तो दूसरी तरफ़ इसके अवाक़िब पर भी निगाह होती है। ग़रज़ यह दौर दो–धारी तलवार की मानिंद होता है। इस दौर का सही इस्तेमाल अगर ज़िंदगी को खूबसूरत बनाता है तो दूसरी तरफ़ ग़लत इस्तेमाल ज़िंदगी को बोझ बना देता है। ग़रज़ यह समझ लीजिए जवानी जिस्म–ए–फ़ानी के लिए रीढ़ की हड्डी की मानिंद है, पूरा जिस्म जिस तरह रीढ़ की हड्डी पर टिका हुआ होता है। उसी तरह फ़ानी ज़िंदगी का पूरा दारोमदार जवानी पर मुनहसिर होता है और जवानी के कारनामे बुढ़ापे का मज़बूत सहारा बनते हैं।

हर ज़माने में नौजवान ही उम्मत का मज़बूत सहारा और उसकी तरक़्क़ी का ज़ामिन होता है। नौजवान ही अपनी क़ौम का मुहाफ़िज़ होता है। क्योंकि यह बग़ैर तवानाई से मालामाल होता है। क़ूव्वत से लबरेज़ होता है, जोश व जज़्बे वाला होता है। अल्लामा इक़बाल ने इस तस्वीर को यूँ पेश किया है:

उक़ाबी रूह जब बेदार होती है जवानों में
नज़र आती है उनको अपनी मंज़िल आसमानों में

लेकिन जवानी उस वक़्त मुफ़ीद और कारामद होती है जब इसका इस्तेमाल मुस्तबत तरीक़े से हो। क़ुरआन व सुन्नत की रोशनी में हो। तामीर के लिए हो न कि तख़रीब के लिए। तरक़्क़ी के लिए हो न कि तनज़्ज़ुली के लिए। अपनी सलाहियतों का सही इस्तेमाल हो, लेकिन यह बात मद्द–ए–नज़र रहे कि जवानी में जोश होता है, खून में गर्मी होती है, मिज़ाज में शिद्दत होती है, लहजे में बसा–औक़ात सख़्ती होती है, ऐसी सूरत में ज़रूरत है कि जवानी के दौर के कुछ लम्हात किसी अल्लाह वाले की निगरानी और सरपरस्ती में गुज़ारे ताकि खुद उसकी ज़िंदगी को सही सिम्त मिले। खुद उसको जीने का मतलब समझ में आए। ख़ासकर अल्लामा इक़बाल ने जवानी का जो बुलंद तसव्वुर पेश किया है, उससे वाक़िफ़ हो और सतही बातों से और सतही कामों से अपने को रोक कर अपनी निगाह पहाड़ की चोटियों पर मरकूज़ करे। अल्लामा इक़बाल फ़रमाते हैं:

नहीं तेरा नशीमन क़स्र–ए–सुल्तानी के गुंबद पर
तू शाहीं है बसेरा कर पहाड़ों की चट्टानों पर

अगर वो ऐसा करेगा तभी वो मुआशरे के लिए मुफ़ीद होगा। इन्क़िलाबात इन्हीं नौजवानों के ज़रिये वजूद–पज़ीर होते हैं। यह उम्र जहाँ एक तरफ़ हालात को बदलने पर क़ुदरत रखती है, वहीं दूसरी तरफ़ ग़लत राह को चुनती हैं बे–राह–रवी, बद–अख़्लाक़ी, बद–किरदारी, ग़लत सोहबत, हर बुरी बात पर अमल भी इस उम्र में होने के ख़तरात बढ़ जाते हैं। अक्सर यह उम्र ज़ाया हो जाती है ला–यानी कामों में, वक़्त के ज़िया में, ख़्वाहिशात की पैरवी में, आज–कल अगर देखा जाए तो यह मंज़र ज़्यादा देखने में आ रहा है कि नौजवानी की यह उम्र ज़ाया हो रही है। चाहे वो मोबाइल के ज़रिये हो, या ला–यानी कामों में इसका इस्तेमाल हो रहा हो, सोशल मीडिया पर घंटों बहस व मुबाहिसे में वक़्त सर्फ़ किया जा रहा है। तामीरी कामों के बजाए तख़रीबी कामों में ज़िंदगी खपाई जा रही है। हमारा तालीम–याफ़्ता तबक़ा जिसको अल्लाह ने सलाहियतों से नवाज़ा वो अपनी तश्हीर में लगा है और दूसरों के कामों को तन्क़ीदी निगाह से देखता है, इख़्तिलाफ़ को मुख़ालिफ़त का रूप देता है, बर्दाश्त, तहम्मुल–मिज़ाजी, बुर्दबारी, इख़्लास व लिल्लाहियत से उसकी ज़िंदगी बिल्कुल मुख़्तलिफ़ है।

तारीख़–ए–इंसानी का मुताला करें तो मालूम होता है कि जो भी बड़ी शख़्सियतें पैदा हुईं और जिन्होंने

मुआशरे पर एक गहरा असर छोड़ा, चाहे वो उलमा हों या फ़ातिहीन जिन्होंने अपनी नौजवानी को एक मक़सद दिया, अपनी ज़िंदगी की सिम्त तय की और उसी के एतबार से आगे बढ़ते चले गए, हर बुरे काम से अपनी जवानी को बचा कर रखा, इस्लाम ने भी जवानी की हिफ़ाज़त करने और अपने आप को बचाने की तरग़ीब दी है, हज़रत यूसुफ़ (अलैहिस–सलाम) का क़िस्सा कुरआन में इसी लिए बयान किया गया है।

नौजवानी इंसान की ज़िंदगी का सबसे अहम मरहला है, क्योंकि इसी दौर में वो अपनी जिस्मानी ताक़त और सलाहियत के उरूज पर होता है। इसी ज़माने में इसके अंदर जोश, जज़्बा और खुद को नीज़ अपने मुआशरे को बेहतर बनाने की ज़्यादा सलाहियत पैदा होती है।

यह फ़िक्री पुख़्तगी और ज़ेहनी बुलूग़त का दौर भी है, बर–ख़िलाफ़ इस तसव्वुर के जो बाज़ लोग रखते हैं कि नौजवानी सिर्फ़ जज़्बातीयत, बे–एहतियाती और ग़ैर–संजिदगी का ज़माना है। अल्लाह तआला ने हज़रत मोहम्मद (स0अ0व0) को चालीस साल की उम्र में नुबूव्वत अता फ़रमाई और दीगर अंबिया–ए–किराम (अलैहिमुस–सलाम) को भी उनकी जवानी के दौर में मबऊस फ़रमाया, क्योंकि यह इंसानी ज़िंदगी में फ़िक्री पुख़्तगी और बेहतरीन ज़ेहनी इस्तेदाद का मरहला होता है।

हज़रत मौलाना सैयद अबुल हसन अली हसनी नदवी (रहमतुल्लाह अलैह) फ़रमाते हैं:

“आज आलम–ए–इस्लाम को ऐसे मर्दान–ए–कार की ज़रूरत है जो सिर्फ़ इसी दावत के पीछे रहें, अपना इल्म, अपनी सलाहियतें और अपना माल व मता इसके लिए वक़्फ़ कर दें। किसी जाह व मंसब या ओहदा व हुकूमत की तरफ़ नज़र उठा कर न देखें। किसी के लिए उनके दिल में कीना व अदावत न हो। फ़ायदा पहुँचाएं खुद फ़ायदा न उठाएं। देने वाले हों, लेने वाले न हों। उनका तर्ज़–ए–अमल सियासी रहनुमाओं के तर्ज़–ए–अमल से मुम्ताज़ और उनकी दावत व जद्दोजहद सियासी तहरीकात (जिसका मतमह–ए–नज़र महज़ हुसूल–ए–इक़्तिदार होता है) मुख़्तलिफ़ और जुदागाना हो। इख़्लास उनका शेआर हो और नफ़्स–परस्ती, खुद–पसंदी और हर क़िस्म की असबियत से बालातरी उनका इम्तियाज़!”

इस्लाम ने नौजवानी के दौर में भरपूर फ़ायदा उठाने पर ज़ोर दिया है। हुज़ूर अकरम (स0अ0व0) की अहादीस में इस तरफ़ वज़ाहत मिलती है, एक हदीस में आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया:

“सात लोगों को उस दिन अर्श–ए–इलाही का साया नसीब होगा जिस दिन इस साये के अलावा कोई साया न होगा। उन सात लोगों में एक वो शख़्स भी होगा जिसकी जवानी अल्लाह की इबादत में परवान चढ़े।”

इसी तरह आप (स0अ0व0) ने फ़रमाया:

“अपनी जवानी को ग़नीमत समझो बुढ़ापे से पहले।”

इस हदीस से यह बात मालूम होती है कि वक़्त का सही इस्तेमाल करना चाहिए। इसको ज़ाया करने से बचाना चाहिए। ला–यानी कामों में अपना वक़्त नहीं लगाना चाहिए।

इसी तरह नौजवानों को सबसे बढ़ कर ईमानी तक़ाज़ों को पूरा करना और उस पर मज़बूती से क़ाइम रहना चाहिए। वह इल्म हासिल करना चाहिए जो मुफ़ीद हो और जिसके ज़रिये क़ौम को फ़ायदा पहुँचे। अपने अख़्लाक़ को बेहतर बनाना चाहिए। मुआशरे की ख़िदमत करनी चाहिए। दावत–ए–दीन का फ़रीज़ा अंजाम देना चाहिए। अपने वक़्त को सही कामों में लगाना चाहिए। उनके अंदर ज़िम्मेदारी का एहसास होना चाहिए। आज ज़रूरत है कि ऐसी सालेह जमाअत का वजूद हो जो अपनी क़ौम की इस्लाह का फ़रीज़ा अंजाम दे और उनको तारीकी से निकाल कर इस्लाम की रोशनी अता करे।

मुफ़क्किर–ए–इस्लाम हज़रत मौलाना सैयद अबुल हसन अली नदवी (रह0) नौजवानों के मुतअल्लिक़ रक़म–तराज़ हैं:

“इस्लाम को इस वक़्त नए ख़ून, नई उमंगों, नए वलवले और नए जोश–ए–अमल और जज़्बा–ए–क़ुर्बानी की ज़रूरत है। यह नया ख़ून, नया जोश और कुर्बानी बहुत सी जगह मौजूद है लेकिन पस्त मक़ासिद और ग़लत मैदानों में सर्फ़ हो रही है, जो चीज़ इस्लाम के काम नहीं आ रही है वो सिर्फ़ ज़ाया हो रही है बल्कि दुनिया की तबाही का बाइस हो रही है। इस्लाम की दावत अभी उन गोशों में नहीं पहुँची।” (नया ख़ून: 24)

पैमाना-ए-मुहब्बत

मुहम्मद मुसअब नदवी

जवाँ मर्द तख़्ता–ए–दार पर खड़ा है, चेहरे पर ख़ौफ़ व हिरास का ज़रा सा भी शाइबा नहीं है। कुशादा पेशानी मेहर–ए–ताबाँ की मिस्ल पुरनूर है। आँखें बता रही हैं कि उसको उसकी हक़ीक़ी मंज़िल मिलने वाली है।

हर तरफ़ शोर बरपा है। अभी उसको सूली पर चढ़ा दिया जाएगा। बच्चे, बूढ़े, मर्द और औरत की एक भीड़ तख़्ता–ए–दार के पास उमड़ आई है। दर्दनाक सज़ा दी जाएगी। बल्कि सरदारान–ए–कुरैश की तरफ़ से ऐलान हुआ है कि लोग घर से बाहर निकल आएँ और मुहम्मद के साथी, मुहम्मद के पैरोकार का इबरतनाक अंजाम अपनी आँखों से देखकर मज़ा लें।

तख़्ता–ए–दार पर मौजूद शख़्स कोई पेशेवर मुजरिम नहीं है। उसकी ज़ात से किसी को कोई नुक़सान नहीं हुआ, बल्कि उसका जुर्म यह है कि उसने एक खुदा को मान लिया है। मुहम्मद रसूलुल्लाह (स0अ0व0) का कलिमा पढ़ लिया है। उसने क़त्ल व ग़ारतगरी, शराब व कबाब, जुआ व क़िमारबाज़ी को बुरा जानकर छोड़ दिया है। वह बच्चियों को ज़मीन के नीचे ज़िंदा दफ़्न नहीं करता है। वह उन कुरैश वालों की तरह लात व मनात के आगे सर नहीं झुकाता है। उसने अपने आबा व अजदाद के बनाए हुए जाहिली रस्म व रिवाज से किनारा–कश होकर हक़ और सच के पैग़म्बर मुहम्मद (स0अ0व0) के साया–ए–आतिफ़त में पनाह ले ली है। यही उसका जुर्म है। सरदारान–ए–कुरैश के नज़दीक इस जुर्म की सज़ा मौत है।

कुरैश का यह मुजरिम कोई और नहीं, बल्कि रसूलुल्लाह (स0अ0व0) के जांनिसार सहाबी हज़रत खुबैब (रज़ि0) हैं, जो तख़्ता–ए–दार के पास पुरसुकून खड़े हुए हैं। जिनको कुफ़्फ़ार–ए–कुरैश ने धोखे और चालबाज़ी से गिरफ़्तार कर लिया है। यह गिरफ़्तारी किसी मैदान–ए–जंग की शिकस्त का नतीजा न थी, बल्कि अह्द व पैमान की आड़ में रचाई गई ग़द्दारी की दास्तान थी।

रसूलुल्लाह (स0अ0व0) ने दस हज़रात पर मुश्तमिल सहाबा किराम की एक जमाअत को किसी ख़ास मिशन के तहत रवाना फ़रमाया था। इसी जमाअत में हज़रत खुबैब (रज़ि0) भी थे। रास्ते में क़बीला बनू लिहयान के सौ मुसलह अफ़राद ने उनको घेरे में ले लिया और यह वादा किया कि अगर तुम लोग पहाड़ी से उतरकर सामने आ जाओ तो हम तुमसे जंग नहीं करेंगे, तुम्हारी जान बख़्श देंगे। मगर कुफ़्फ़ार व मुशरिकीन कैसे वफ़ा कर सकते हैं तौहीद के परस्तारों के साथ। जिन हाथों ने अमान का यक़ीन दिलाया था, उन्हीं हाथों ने तलवारें खींच लीं। कई जांनिसार सहाबा शहादत से सरफ़राज़ हुए और हज़रत खुबैब (रज़ि0) गिरफ़्तार कर लिए गए।

फिर इंतिक़ाम की आग में झुलस रहे कुफ़्फ़ार ने उन्हें मक्का वालों के हाथ बेच दिया ताकि बद्र की शिकस्त–ए–फ़ाश का बदला एक बेबस क़ैदी के ज़रिये लिया जाए। अभी जल्दी ही तो मुसलमानों की मुट्ठी भर जमाअत ने कुरैश को बद्र के मैदान में रुस्वा–कुन शिकस्त दी है। कुरैश कहीं मुँह दिखाने लायक़ नहीं बचे हैं। वह कैसे भूल सकते हैं अपने सरदार अबू जहल और उत्बा की दर्दनाक मौत को। आज कुरैश के हाथ मौक़ा आया है कि वह मुहम्मद (स0अ0व0) के एक साथी को मजमा–ए–आम के सामने क़त्ल करके अपने दामन पर लगे हुए ज़िल्लत व रुस्वाई के दाग़ को धोने की कोशिश करें। मगर उन्हें क्या ख़बर थी कि वह सिर्फ़ एक मुसलमान को नहीं क़त्ल कर रहे हैं, बल्कि वह तारीख़ में ईसार व मुहब्बत के एक ऐसे बाब को ज़िंदा व ताबंदा करने जा रहे हैं जिसकी रौशनाई क़यामत तक खुश्क नहीं हो सकती। जिसकी किरनें ईमान वालों को हरारत बख़्शती रहेंगी।

मौत हज़रत खुबैब (रज़ि0) के सामने है। वह जानते

हैं कि उनके जिस्म के साथ क्या सुलूक होने वाला है, मगर वह मुतमईन हैं कि मुहम्मद (स0अ0व0) की गुलामी में मौत का आना दुनिया की तमाम बख़्शिशों और कामयाबियों से बेहतर है। हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) का चेहरा बशाशत से निखर रहा है, क्योंकि उन्हें मालूम है कि जब मैं मुसलमान होने की हालत में शहीद किया जा रहा हूँ तो मुझे कोई परवाह नहीं कि अल्लाह की राह में मेरा जिस्म किस पहलू पर गिरेगा। यह सब कुछ मेरे अल्लाह की रज़ा के लिए है, और अगर वह चाहे तो मेरे (जिस्म के) कटे–फटे टुकड़ों और जोड़ों पर भी बरकत नाज़िल फ़रमा देगा।

हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) की निगाहें सामने खड़ी मौत को नहीं बल्कि उस जन्नत को देख रही थीं जिसका वादा अल्लाह ने अपने वफ़ादार बंदों से फ़रमाया है। जिस्म छलनी हो सकता है, ख़ून की धारें फूट सकती हैं, रूह जिस्म से परवाज़ कर सकती है, मगर वह दिल जिसमें मुहब्बत–ए–रसूल (स0अ0व0) और मारिफ़त–ए–इलाही बसी हो, उसे दुनिया की कोई ताक़त शिकस्त नहीं दे सकती। यही वजह है कि उनके चेहरे पर ख़ौफ़ की जगह सुकून, इज़्तिराब की जगह इत्मिनान और मायूसी की जगह मसर्रत नुमायाँ थी।

इधर मजमे में हर तरफ़ से आवाज़ें उठने लगीं। ठहाके लग रहे हैं, फ़िक़रे कसे जा रहे हैं। कोई कहता है, "क्या मिल गया मुहम्मद (स0अ0व0) की गुलामी इख़्तियार करके? पलट आओ अपने पुराने रस्म व रिवाज की तरफ़, उज़्ज़ा व मनात की तरफ़।" कोई कहता है, "छोड़ दो इस्लाम, जान बख़्श दी जाएगी।" कहीं से आवाज़ आती है, "कोई आख़िरी तमन्ना है तो बतलाओ, पूरी कर दी जाएगी।"

इसी शोर व गुल में हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) की एक बावक़ार सदा फ़िज़ा में बुलंद होती है। कहते हैं, "दो रकअत नमाज़ पढ़ने की तमन्ना है।" और आप दो रकअत की नियत बाँध लेते हैं। क्या ही पुरसुकून नमाज़ थी। नमाज़ से फ़ारिग़ हुए, गोया आपके क़ल्ब–ए–मुबारक पर शबनम बरस रही हो। इस क़दर ख़ुश थे। कहा, "मेरा जी चाहता था कि मैं अपनी नमाज़ को लंबी करूँ, मगर मुझे यह डर हुआ कि कहीं तुम यह न कहो कि मौत के डर से नमाज़ को तवील कर रहा हूँ।"

क़ुरैश इस साबित–क़दमी को देखकर हैरतज़दा हो गए। हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) को सलीब पर चढ़ा दिया गया। तीरअंदाज़ों ने अपने हुनर आज़माए। तीर जिगर के पार हुए। ज़ख़्म पर ज़ख़्म लगने लगे। इसी अस्ना में एक बदबख़्त तंज़िया अंदाज़ में मचलकर कहता है, "ख़ुबैब! क्या तुम सोच रहे हो कि मुहम्मद (स0अ0व0) तुम्हारी जगह होते और तुम बच जाते?" हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) जलाल में आ गए। शिकस्ता हालत में ज़ख़्मी शेर की तरह बिफ़रकर दहाड़े, "ख़ुदा की क़सम! मुझे यह तक गवारा नहीं कि मुहम्मद (स0अ0व0) को एक काँटा चुभ जाए और उसके बदले मेरी जान बख़्श दी जाए।"

महफ़िल पर एक सन्नाटा तारी हो गया। लोगों ने इस जवाब को सुनकर दाँतों तले उँगलियाँ दबा लीं। हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) का जिस्म तीरों से छलनी करके ठंडा कर दिया गया। आपने शहादत को ख़ुशी–ख़ुशी गले लगा लिया।

यह हैं हमारे अस्ल हीरो। क़ुर्बान जाइए हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) की अपने नबी से मुहब्बत पर, ईमान और इस्लाम से मुहब्बत पर।

इसमें इबरत है मुसलमान मर्द व औरत के लिए जो ज़रा–सी आज़माइश पर ईमान से समझौता करते हैं। इसमें वह पैमाना–ए–मुहब्बत है जिस पर हम और आप अपने आप को तौलें। हज़रत ख़ुबैब (रज़ि0) और तमाम सहाबा किराम की ज़ात हमेशा से सरापा ईसार व क़ुर्बानी की पैकर रही है। यही हमारे लिए मशअल–ए–राह हैं, यही हैं हमारे क़ाइद व रहनुमा। ख़ुबैब (रज़ि0) और आपके साथियों की जमाअत वह मुबारक जमाअत है जिसकी ईमान की तरबियत, जिसकी शख़्सियत–साज़ी ख़ुद हमारे हुज़ूर (स0अ0व0) ने फ़रमाई है। इस जमाअत में आपको मुहम्मद (स0अ0व0) की तेइस साल की ज़िंदगी की चमनबंदी का हासिल मिल जाएगा।

इसलिए हम मुसलमानों को अगर हज़ारों जमाअतों में से किसी का इंतिख़ाब करना हो, समंदर में से एक मौज पर तवज्जो मरकूज़ करनी हो, रंग–बिरंगे फूलों में से कोई एक फूल लेना हो, धनक के सात रंगों में एक का नाम लेना हो, तो हम बग़ैर किसी तरद्दुद के जमाअत–ए–सहाबा का नाम लेंगे।

इर्तिदाद की लहर – असबाब व इलाज

मुहम्मद अरमग़ान बदायूनी नदवी

अगर कोई व्यक्ति कलिमा–ए–तय्यबा का क़ाइल होने के बाद मज़हब इस्लाम से (नऊज़बिल्लाह) मुतनफ़्फ़िर हो जाए और दीन के बुनियादी अक़ाइद को न माने, या वह दीनी फ़राइज़ पर जान–बूझकर अमल न करने का ऐलान करे तो वह शरीअत की इस्तिलाह में "मुर्तद" कहलाता है। इर्तिदाद की यही वह वाज़ेह शक्ल है जिसके मुताल्लिक हज़रत अबूबक्र सिद्दीक़ (रज़ियल्लाहु अन्हु) का जुम्ला मशहूर है कि "मेरे जीते जी दीन में कतर–ओ–बयूनत मुमकिन नहीं।"

तारीख़ इस्लाम में मजमूई तौर पर ऐसे वाक़्यात बहुत कम मिलेंगे जिनसे मालूम होता हो कि एक ही वक़्त में पूरा इलाक़ा इस नौईयत के इर्तिदाद का शिकार हुआ हो बल्कि हर दौर में बहुत सी कोताहियों और ख़ामियों के बावजूद मुसलमानों के अंदर अपने दीन के तईं अदब–ओ–लिहाज़ के जज़्बात पाए जाते रहे हैं। बाज़ औक़ात यह मुमकिन है कि मुसलमान बजाए खुद सुन्नतों पर अमल न करें लेकिन यह बात किसी अदना मुसलमान को कभी ग़वारा न हुई और न होगी कि उसके नबी पाक (स0अ0व0) की शाने अक़दस में गुस्ताख़ी की जाए। अपने दीन–ओ–मज़हब के लिए मर–मिटने का यही वह जज़्बा है जिससे दुनिया के दूसरे मज़ाहिब तही–दामन हैं और इसकी बुनियादी वजह यह है कि न उनके पास एक मुकम्मल निज़ाम–ए–ज़िंदगी मौजूद है और न ही कोई ऐसी शख़्सियत जो उनके लिए आदर्श बनने की अहल हो।

यह हक़ीक़त भी अपनी जगह मुसल्लम है कि अगर ऐलानिया तौर पर दीन–बेज़ारी की लहर चलाई जाए या क़ौम मुस्लिम के सामने उसके दीनी शआइर का मज़ाक़ उड़ाया जाए तो उसे कोई साहिब–ए–ईमान बर्दाश्त नहीं करेगा। ऐसी सूरत में दुश्मन ताक़तों के लिए यही तरीक़ा बाक़ी रह जाता है कि वे हमारे इस नए ख़ून को ज़िहनी–ओ–फ़िक्री लिहाज़ से क़ल्लाश बना दें जो मुस्तक़बिल में क़यादत का फ़र्ज़–ए–मनसबी अदा करने का अहल हो सकता था।

मौजूदा दौर में इर्तिदाद की जो एक आम लहर नज़र आती है, हक़ीक़त में यह इसी मन्सूबा–बंद साज़िश का एक हिस्सा है। इस वक़्त जो निज़ाम–ए–तअलीम राएज है, तर्बियत के मौक़े जिस तरह मफ़क़ूद हैं और मद्दियत की ख़ूं–ख़ार मौजें ख़स–ओ–ख़ाशाक की तरह हर चीज़ को अपनी ज़द में लिए हुए हैं नीज़ बे–हयाई–ओ–फ़ह्हाशी की अर्ज़ानी ने बग़ैर मज़हब–ओ–मिल्लत की तफ़रीक़ के जिस तरह पूरी नस्ल–ए–नव को बर्बाद कर दिया है। इसके बाद इसकी तवक्क़ु करना मुश्किल है कि कोई भी नस्ल अपने मज़हब पर बाक़ी रह सकेगी। मज़हब के मुताल्लिक अगर कोई तस्व्वुर है तो बस इतना कि वह चंद इबादात का मजमूआ है।

अगर देखा जाए तो इस वक़्त इर्तिदाद के जो वाक़्यात पेश आ रहे हैं, उनकी वजह यह नहीं कि लोग दीनी अहकाम–ओ–अमल से मुतनफ़्फ़िर हैं और उनकी तबीअत इस पर अमल के लिए आमदा नहीं बल्कि वाक़्या यह है कि उन्हें अपने मज़हब का इल्म नहीं और न ही वह ईमान–ओ–अक़ाइद से वाक़िफ़ हैं। उनके नज़दीक अपने मज़हब पर क़ायम रहते हुए किसी भी मज़हबी रसूम में शरीक हो जाना, मुशरिकाना अमल को बुरा न समझना, यहां तक कि ग़ैरों के साथ शादी कर लेना भी कोई मायूब बात नहीं बल्कि उनका ख़्याल है कि मज़हब को इन सब कामों पर ऐतराज़ का कोई हक़ नहीं। यही वजह है कि आज मुसलमानों के हर इलाक़े में ऐसे सोहान–ए–रूह वाक़्यात पेश आ रहे हैं जिनसे पूरी क़ौम मुस्लिम का सर शर्म से झुक जाए।

इर्तिदाद की यह शक्ल इस्तिलाही इर्तिदाद से ज़्यादा ख़तरनाक है, इसलिए कि इस्तिलाही तौर पर मुर्तद होने वाला ज़ुमरा इस्लाम से ख़ारिज हो जाता है, ताहम इर्तिदाद की मौजूदा शक्लों में आदमी का नाम और उसकी पहचान मुसलमानों की होती है और हक़ीक़त इसके बिल्कुल बरअक्स!

याद रखें! अगर मौजूदा सूरतेहाल इसी तरह बरक़रार

रही तो हमारी बर्बादी के लिए किसी बैरूनी दुश्मन या असलहा और फ़ौज की ज़रूरत नहीं बल्कि हम खुद अपने हाथों पूरी तरह बर्बाद हो जाएंगे। इस वक़्त हम में से हर फ़र्द को संजीदगी के साथ सोचने की ज़रूरत है कि पानी कहां मर रहा है और बुनियादी ग़लतियां क्या–क्या हो रही हैं?! फिर यह सोचना भी ज़रूरी है कि इसके इलाज और तदारुक की क्या शक्लें मुमकिन हैं?!

इस वक़्त ईमान–ओ–अक़ाइद की बुनियादों को मुतज़लज़िल करने के लिए जो निसाब–ओ–निज़ाम–ए–तअलीम रायज है, वह ऐसा ज़हर–नाक है कि उसके नतीजे में आदमी के अंदर दीन की बे–वक़अती पैदा होना यक़ीनी है। इब्तिदा में इस पर ध्यान नहीं दिया जाता फिर वही चीज़ नासूर बन जाती है।

यह भी इस वक़्त का एक अल्मिया है कि आदमी पढ़ने–लिखने की दुनिया से जब फ़ुरसत पाता है तो उसकी तफ़रीह–ए–तबअ का सबसे दिलचस्प ज़रिया सोशल मीडिया और डिजिटल दुनिया है जिसके बग़ैर मौजूदा नस्ल एक मिनट नहीं गुज़ार सकती। सोशल मीडिया का बे–क़ैद इस्तेमाल नस्ल–ए–नव के हक़ में ज़हर–ए–हलाहल से कम नहीं। फ़वाहिश–ओ–मुनकरात का सैलाब बिलाख़ेज़ और मज़हब से दूरी पैदा करने वाले अफ़कार–ओ–नज़रियात की यह ऐसी मुफ़्त ट्यूशन है जिसकी मौजूदगी में किसी बैरूनी और मन्सूबा–बंद प्लानिंग की ज़रूरत नहीं।

मुस्लिम घरानों में ईमान–ओ–अक़ाइद की अदनम–हस्सासियत भी एक बड़ा मसला है। हमारे सामने बच्चों के ताबनाक मुस्तक़बिल का चौलेंज तो होता है लेकिन ईमान–ओ–इस्लाम को एक पुश्तैनी विरासत समझ लिया जाता है जिसके मुताल्लिक फ़िक्र–मंदी की चंदां ज़रूरत महसूस नहीं की जाती। यही वजह है कि जब हमारे बच्चे मख़लूत निज़ाम–ए–तअलीम का हिस्सा बनते हैं और मुख़्तलिफ़ मज़ाहिब के बच्चों के साथ बंद कमरे में तअलीम हासिल करते हैं तो वह बड़ी आसानी से दीन का सौदा कर बैठते हैं।

मुस्लिम समाज का फ़िक्री–ओ–अमली जमूद भी इस सूरत–ए–हाल का बड़ी हद तक ज़िम्मेदार है। आज का नौजवान ज़िहन–ओ–दिमाग़ में ख़ुराफ़ात–ओ–वसाविस और मज़हब के मुताल्लिक बहुत से शकूक–ओ–शुबहात का शिकार है, अपनी मद्दी ज़िंदगी के गेसुए–बर्हम को सुलझाने में सरगरदां है, आला मेयार–ए–ज़िंदगी के हुसूल में सरपट दौड़ रहा है। माद्दियत की इस रेस में दौलत का बे–इंतहा हरीस है। इसीलिए अगर उसे अच्छी मुलाज़िमत या तिजारत का कोई ज़र्रीं मौक़ा मिल जाए तो वह इस बात पर ग़ौर नहीं करता कि उसका दीन बाक़ी रहेगा या नहीं? इसी तरह अगर नाजाइज़ मुहब्बत का असीर हो जाए तो भी वह दीन–ओ–मज़हब के हुदूद–ओ–क़यूद को ख़ातिर में लाना ग़वारा नहीं करता। गोया उसके नज़दीक मज़हब एक सानवी दर्जे की चीज़ है, जबकि माद्दी ज़िंदगी की तरक़्क़ी उसकी अव्वलीन तर्जीह है।

मौजूदा हालात की संगीनी हर मुसलमान से इस बात की मुतक़ाज़ी है कि वह अपनी सतह पर दीन–ओ–मिल्लत के लिए बेदार हो। अपने मुताल्लिक़ अफ़राद और समाज का भरपूर जाइज़ा ले। ईमान–ओ–अक़ाइद की हस्सासियत को समझे और समझाए। बेहतर माहौल में तालीम देने की कोशिश करे। असरी तालीम के मौक़े भी फ़राहम करे मगर ईमान में पूरे तस्सुलब के साथ, घर और ख़ानदान में ईमानी फ़िज़ा बनाए। इस्लाम के निज़ाम–ए–अख़्लाक़ और निज़ाम–ए–मआशरत का मुताला करे और नस्ल–ए–नव को उससे रोशनास कराने की कोशिश करे। सोशल मीडिया के बे–मिहार इस्तेमाल पर बंदिश लगाए। अपने बच्चों की सोसाइटी, हलक़ा–ए–अहबाब और उनकी नक़ल–ओ–हरकत पर नज़र रखे। सुन्नतों से इश्क़ उनके मिज़ाज में पैदा करे और उनके लिए रोज़गार के ऐसे जाइज़ मौक़े फ़राहम करने की कोशिश करे जो दीन से हम–आहंग हों। इस वक़्त की यह भी एक बड़ी ज़रूरत है कि नस्ल–ए–नव के ज़िहन–ओ–दिमाग़ को मुतमईन किया जाए। उसके तरज़–ए–फ़िक्र और तरज़–ए–ज़िंदगी को मुतास्सिर किया जाए और उसके रुख़ को सही सिम्त देने की कोशिश की जाए। उसके जाइज़ तक़ाज़ों को पूरा करने में अगर माली ताऊन की, किफ़ालत का मसअला हो तो उस पर भी मुनज़्ज़म तरीक़े से मेहनत की जाए और अपने समाज के हर फ़र्द की इआनत एक दीनी फ़रीज़ा तस्व्वुर किया जाए। आम तौर पर इस सिलसिले में हमारी ग़फ़लत–ओ–कोताही का नतीजा यह होता है कि बातिल ताक़तें हमारे कमज़ोर और मफ़लूक़–उल–हाल लोगों का इस्तिमाल करके ईमान का सौदा कर लेती हैं। यह वक़्त महज़ तहरीरों, तक़रीरों और मीटिंगों का नहीं और न ही सिर्फ़ चंद ख़ुशनुमा बातों से मसाइल का हल मुमकिन है। ज़रूरत है कि ज़मीनी सतह पर उतर कर हालात का जाइज़ा लिया जाए और लोगों की ज़रूरियात को समझकर उन्हें पूरा करने की कोशिश की जाए और हक़ाइक़ से भी आगाह किया जाए।

दाई-ए-इस्लाम के उपदेश

अक़ीदा–ए–तौहीद पर ख़ुसूसियत के साथ तवज्जो की ज़रूरतः "हर मुसलमान को अक़ीदा–ए–तौहीद की फ़िक्र करना निहायत ज़रूरी है। बड़े अफ़सोस की बात है कि आजकल ज़्यादातर लोग फ़ुरूआत (छोटी–छोटी चीज़ों) में उलझे हुए हैं; जैसेः नमाज़ में रफ़–ए–यदैन ज़रूरी है कि नहीं? आमीन बिल–जहर और क़िराअत ख़ल्फ़ुल–इमाम के बग़ैर नमाज़ होगी या नहीं? लेकिन उन्हें इस बात की फ़िक्र नहीं होती कि लोगों की एक बड़ी तादाद को कलमा याद नहीं है और न ही उनका अक़ीदा सलामत है और अगर बिलफ़र्ज़ किसी ने अक़ीदे की फ़िक्र की भी तो उसमें भी इख़्तिलाफ़ी मसाइल को मौज़ू बना लिया जाता है, जिससे नुक़सान के सिवा कोई फ़ायदा नहीं। इस वक़्त उन मुस्लिम नौजवानों पर ख़ुसूसियत के साथ तवज्जो देने की ज़रूरत है जिन्हें सही से कलमा भी याद नहीं है और यही इस वक़्त का असल काम है। आज सूरत–ए–हाल यह है कि आदमी बस नाम का मुसलमान है और ईमान की हक़ीक़त से बिल्कुल बे–बहरा (महरूम) है। ग़ौर का मक़ाम है कि अगर इसी हालत में वह मर जाए तो उसका अंजाम क्या होगा?! इसलिए इस पर ख़ास तवज्जो की ज़रूरत है। इस सिलसिले में अइम्मा–ए–मसाजिद (मस्जिदों के इमामों) को चाहिए कि वह एक–एक घर का सर्वे करें और अपनी मस्जिद से मुतअल्लिक़ तमाम अफ़राद के ईमान का जायज़ा लें और उनको कलमे की दौलत से मालामाल करें।"

तीन अहम बातेंः "पहली बात यह कि हराम और मुश्तबेह (शक वाले) माल से परहेज़ ज़रूरी है, इसलिए कि हराम माल से नस्लें बिगड़ जाती हैं। अगर नस्लों को बढ़ाना और तरक़्क़ी देनी हो तो हराम से परहेज़ फ़र्ज़ है। दूसरी बात यह कि किसी को कभी तकलीफ़ मत दो। तीसरी बात यह कि कभी ज़ालिम न बनो।"

दाईयान–ए–दीन (दीन की दावत देने वालों) से एक अहम बातः "इसमें शुब्हा नहीं कि इस वक़्त हालात बहुत नाज़ुक और ख़राब हैं। इस दौर का यह एक आम मर्ज़ है कि लोग दीनी काम करने वालों के ख़िलाफ़ बोलते रहते हैं। ऐसे ना–मुवाफ़िक़ (प्रतिकूल) हालात में हवा के मुवाफ़िक़ चलने के बजाय हवा के ख़िलाफ़ चलना ही अज़ीमत (बहादुरी) है। अगर आदमी डटा रहा तो यक़ीनन उसको ग़ैर–मामूली तरक़्क़ी और कामयाबी हासिल होगी। ऐसे ख़ास शख़्स की मिसाल हवाई जहाज़ की है जो हवा के ख़िलाफ़ उड़ता है और घंटों का सफ़र मिनटों में तय कर लेता है। इसके बर–अक्स वह शख़्स जो हवा के मुवाफ़िक़ चल कर काम करने की कोशिश करता है, उसकी मिसाल बादबानी कश्ती (पाल वाली नाव) की है, जो हवा के मुवाफ़िक़ होकर चलती है और बहुत देर से साहिल–ए–मराद (मंज़िल) को पहुँचती है। हासिल यह कि ऐसे माहौल में हिम्मत, जवाँमर्दी और जुर्रत–ए–रिंदाना के साथ काम करने की ज़रूरत है।"

हक़ीक़ी मोहब्बत का तक़ाज़ाः "अगर आदमी को हुज़ूर (स०अ०व०) से सच्ची मोहब्बत हो तो फिर इस्लाम पर अमल करना आसान होगा और उसको एक राहत–ओ–सुकून नसीब होगा। लेकिन यह राहत उसी को मिलेगी जिसके अंदर मोहब्बत का सही जज़्बा हो; अगर किसी के अंदर मोहब्बत किसी दूसरी ग़रज़ से है तो उसे राहत नहीं मिल सकती और वह परेशान रहेगा।"

मुनाफ़िक़ और मोमिन की पहचानः "मुनाफ़िक़ की सिफ़त है हर माहौल में ढल जाना, जबकि मोमिन की सिफ़त है हक़ बात के लिए जम जाना।"

ज़ब्त–ओ–पेशकशः मुहम्मद अज़ीमुद्दीन नदवी

हज़रत मौलाना सैय्यद अब्दुल्लाह हसनी नदवी (रह०)

R.N.I. No.
UPHIN/2009/30527

Monthly
ARAFAT KIRAN
Raebareli

Issue: 08 ❃ August 2026 ❃ Volume: 18

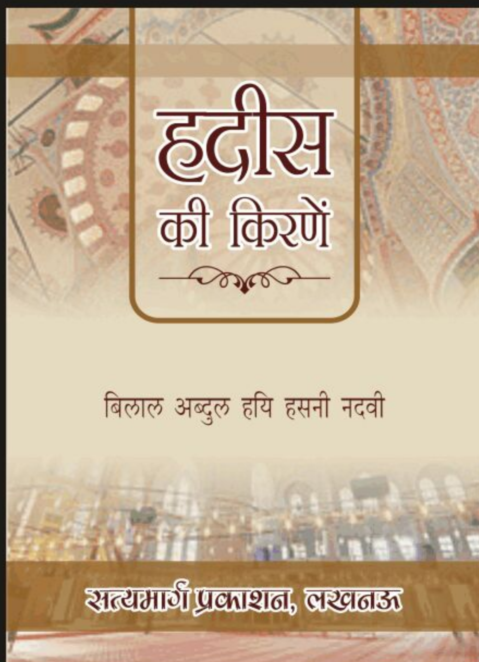

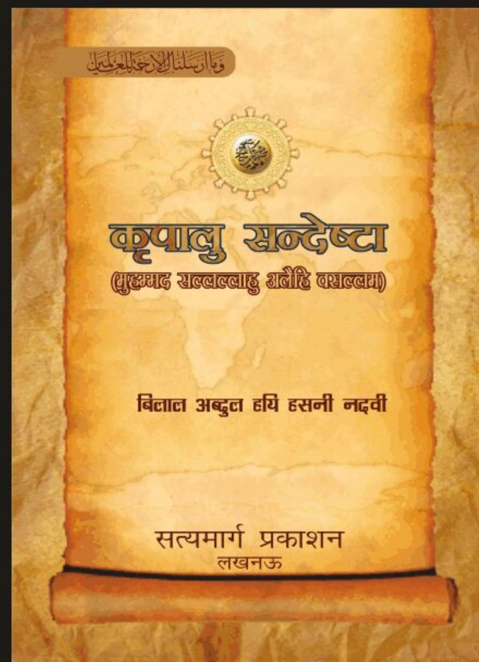

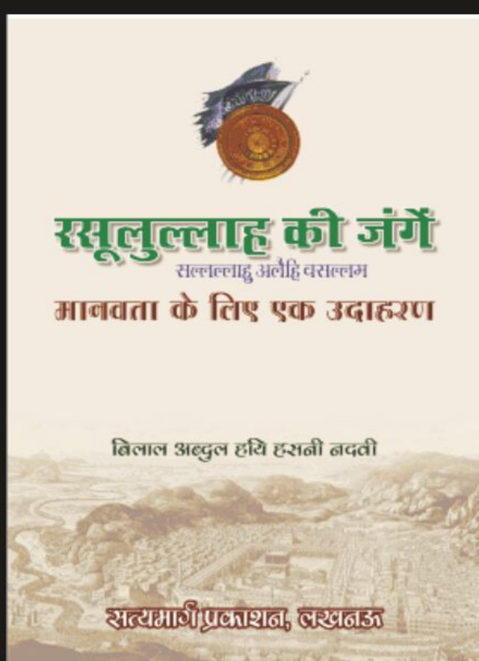

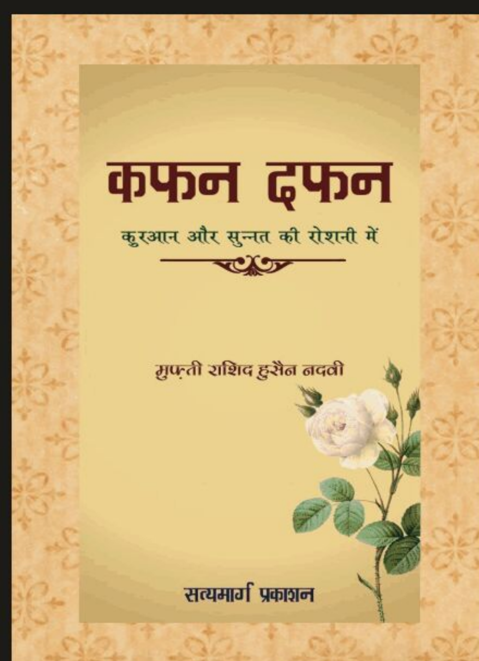

Editor: Bilal Abdul Hai Hasani Nadwi
MARKAZUL IMAM ABIL HASAN AL-NADWI
Dare Arafat, Takiya Kalan, Raebareli, U.P.
Mobile:9565271812
E-Mail: markazulimam@gmail.com
www.abulhasanalinadwi.org

Printed & Published by: Mohammad Hasan Nadwi
On Behalf of: Markazul Imam Abil Hasan Al-Nadwi
Printed at S.A. Offset Printers, Masjid ke peeche,Phatak Abdullah Khan, Sabzi Mandi, Station Road, Raebareli, U.P.